भारत सरकार
भारत का विधि आयोग

निर्वाचक निरर्हताएं

रिपोर्ट सं. 244

फरवरी, 2014

बीसवें विधि आयोग का गठन विधि कार्य विभाग, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा जारी आदेश सं. ए-45012/1/2012-प्रशा.-III (एल.ए.) तारीख 8 अक्तूबर, 2012 द्वारा 1 सितंबर, 2012 से तीन व-र्ा की अवधि के लिए किया गया ।

विधि आयोग पूर्णकालिक अध्यक्ष, चार पूर्णकालिक सदस्य (सदस्य सचिव सहित), दो पदेन सदस्य और पांच अंशकालिक सदस्यों से मिलकर बना है ।

अध्यक्ष

माननीय न्यायमूर्ति ए. पी. शहा

पूर्ण कालिक सदस्य

न्यायमूर्ति एस. एन. कपूर
प्रो. (डा.) मूलचंद शर्मा
न्यायमूर्ति ऊ-ा मेहरा
श्री एन. एल. मीणा, सदस्य सचिव

पदेन सदस्य

श्री पी. के. मल्होत्रा, सचिव (विधायी विभाग और विधि कार्य विभाग)

अंशकालिक सदस्य

प्रो. (डा.) जी. मोहन गोपाल
श्री आर. वेंकटरमणी
प्रो. (डा.) योगेश त्यागी
डा. विजय नारायण मणि
प्रो. (डा.) गुरजीत सिंह

विधि आयोग
14वें तल, हिंदुस्तान टाइम्स हाउस,
के. जी. मार्ग,
नई दिल्ली - 110001 पर स्थित है ।

सदस्य सचिव

श्री एन. एल. मीणा

अनुसंधान अधिकारी

डा. (श्रीमती) पवन शर्मा	:	अपर विधि अधिकारी
श्री ए. के. उपाध्याय	:	अपर विधि अधिकारी
श्री एस. सी. मिश्र	:	उप विधि अधिकारी
डा. वी. के. सिंह	:	उप विधि अधिकारी

इस रिपोर्ट का पाठ http://www.lawcommissionofindia.nic.in
इंटरनेट पर उपलब्ध है ।

© भारत सरकार
भारत का विधि आयोग

न्यायमूर्ति अजित प्रकाश शहा
भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश, दिल्ली उच्च न्यायालय
अध्यक्ष
भारत का विधि आयोग
भारत सरकार
हिन्दुस्तान टाइम्स हाउस
कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली - 110001
दूरभा-न : 23736758 फैक्स : 23355741

Justice Ajit Prakash Shah
Former Chief Justice of Delhi High Court
Chairman
Law Commission of India
Government of India
Hindustan Times House
K.G. Marg, New Delhi-110 001
Telephone : 23736758, Fax : 23355741

अ.शा. सं. 6(3)240/2013-एल.सी.(एल.एस.)
तारीख 24 फरवरी, 2014

प्रिय श्री कपिल सिब्बल जी,

1. जब विधि आयोग निर्वाचक सुधारों पर सरकार को अपने सुझाव देने के कार्य में रत था तब **पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन और अन्य** बनाम **भारत संघ और एक अन्य** वाले मामले में अ.शा. सं. 4604/2011/एस.सी./पी.आई.एल.(डब्ल्यू.) तारीख 21 अगस्त, 2013 द्वारा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा आदेश पारित किया गया ।

2. पूर्वोक्त आदेश में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह उल्लेख किया कि विधि आयोग निवाचक सुधारों के सभी पहलुओं पर व्यापक रिपोर्ट देने के लिए कुछ समय लगा सकता है । तथापि, माननीय न्यायालय ने आगे यह उल्लेख किया कि ''राजनीति के निरपराधीकरण और मिथ्या शपथपत्र फाइल करने पर निरर्हता से संबंधित मुद्दों पर पूर्विकता और तत्काल विचार किए जाने की आवश्यकता है'' और तदनुसार विधि आयोग से निम्नलिखित दो मुद्दों पर फरवरी, 2014 के अंत तक रिपोर्ट देने के लिए शीघ्र विचार करने का अनुरोध किया, अर्थात् :

1. क्या निरर्हता दो-नसिद्धि पर जैसा इस समय है या न्यायालय द्वारा आरोपों की विरचना पर या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन अन्वे-नक अधिकारी द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने पर होनी चाहिए [परामर्श पत्र का मुद्दा सं. 3.1(ii), और

2. क्या लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 125क के अधीन मिथ्या शपथपत्र का फाइल करना निरर्हता का एक आधार होना चाहिए और यदि हां, तो

शपथपत्र की सत्यता के न्यायनिर्णयन के लिए किस प्रकार की तकनीक अपनाए जाने की आवश्यकता है ? [परामर्श पत्र का मुद्दा सं. 3.5]

3. तदनुसार मामले को उस तीन मास की अवधि के लिए स्थगित किया गया जिसके भीतर विधि आयोग से पूर्वोक्त दो मुद्दों पर भारत सरकार को माननीय उच्चतम न्यायालय को अग्रेनित किए जाने के लिए अपना उत्तर प्रस्तुत करने की प्रत्याशा थी ।

4. उपरोक्त आदेश तारीख 16.12.2013 के अनुसरण में, विधि आयोग ने यथापूर्वोक्त दो मुद्दों पर विचार करने का कार्य आरंभ किया । आयोग ने स्वयं द्वारा आयोजित रा-ट्रीय संगो-ठी समेत आयोग के भीतर विस्तृत विचार-विमर्श के साथ-साथ विभिन्न वर्ग के पणधारियों और आम जनता के सदस्यों से विस्तृत चर्चा की ।

5. तदनुसार, आयोग ने ''निर्वाचक निरर्हताएं'' शी-र्क वाली 244वीं रिपोर्ट के रुप में अपनी सिफारिशें तैयार की हैं, जो यहां संलग्न है ।

6. माननीय न्यायालय के निदेशों के अनुसार, इस रिपोर्ट को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाने की अपेक्षा है । माननीय न्यायालय के समक्ष मामले में सुनवाई की अगली तारीख 10.03.2014 है ।

7. श्री अर्ध्य सेन गुप्ता, सुश्री श्रीजोनी सेन, श्री गौरव गुप्ता, सुश्री प्राची सतीजा और सुश्री मनु पंवर नवयुवक अधिवक्ताओं द्वारा भारत के विधि आयोग को दी गई मूल्यवान सहायता की प्रशंसा करता है ।

सादर,

भवदीय
ह0/-
(अजित प्रकाश शहा)

श्री कपिल सिब्बल,
माननीय विधि और न्याय मंत्री,
शास्त्री भवन
नई दिल्ली - 110 001

निर्वाचन निरर्हताओं पर विधि आयोग की रिपोर्ट

I.	प्रक्रिया का आरंभ	7
II.	परामर्श पत्र के फलस्वरूप प्राप्त उत्तर	9
III.	रा-ट्रीय परामर्श	12
IV.	सुधार की आवश्यकता	18
अ.	स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचन	18
आ.	राजनीति के अपराधीकरण का विस्तार	21
इ.	राजनैतिक दलों की भूमिका	23
ई.	विद्यमान विधिक अवसंरचना	27
उ.	इस अवसंरचना का निर्वचन करने वाले उच्चतम न्यायालय के निर्णय	29
ऊ.	सुधारों की सिफारिश करने वाली पूर्व रिपोर्टें	32
V.	आरोपों की विरचना के प्रक्रम पर निरर्हता	36
अ.	तर्काधार	36
आ.	सुधार प्रस्ताव	40
इ.	सुरक्षोपाय	50
ई.	वर्तमान सांसद/विधायक के विरुद्ध विरचित आरोप	53
उ.	पूर्वव्यापी उपयोजन	56
VI.	मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के परिणाम	58
अ.	तर्काधार	58
आ.	सुधार प्रस्ताव	64
VII.	सुधार और प्रस्तावित धाराएं	67
अ.	नि-क-र्ा और सिफारिशें	67
आ.	प्रस्तावित धाराएं	69

I. प्रक्रिया का आरंभ

विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार ने बीसवें विधि आयोग से 'निर्वाचक सुधार' के मुद्दे पर इसके समग्रता में विचार करने और विधि में परिवर्तन करने के व्यापक सुझाव देने का अनुरोध करते हुए 16 जनवरी, 2013 को एक पत्र लिखा ।

तदनुसार, आयोग ने कई समितियों और आयोगों द्वारा दी गई पूर्व रिपोर्टों सहित वि-नय के साहित्य को एकत्र कर, मिलानकर और विश्ले-ण कर वि-नय के विभिन्न फलकों पर कार्य आरंभ किया । उपरोक्त के अलावा, वि-नय की जटिलता और लोकतंत्र की प्रास्थिति और स्वास्थ्य के समेकित संबंध को मान्यता प्रदान करते हुए, आयोग ने विभिन्न पणधारियों के विचार और राय जानना आवश्यक समझा । सिफारिशें करने हेतु आयोग की सोच के अवधारण के लिए इसमें राजनैतिक दलों, न्यायविदों, शिक्षाविदों, सार्वजनिक जीवन के प्रख्यात व्यक्तियों, सिविल सोसाइटी के प्रतिधिनियों और अन्य लोगों से वि-नय के राजनैतिक, विधिक, सामाजिक और अन्य फलकों पर विभिन्न बहसों, वार्तालापों में विचार-विमर्श करना सम्मिलित है । विस्तृत विचार-विमर्श के पश्चात् तत्कालीन अध्यक्ष न्यायमूर्ति (सेवानिवृत्त) डी. के. जैन, भूतपूर्व न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय के मार्गदर्शन के अधीन आयोग द्वारा परामर्श पत्र तैयार किया गया । परामर्श पत्र अन्य बातों के साथ-साथ राजनीति के निरपराधीकरण और आपराधिक पूर्ववृत्त वाले अभ्यर्थियों की निरर्हता और निरर्हता की अवधि से संबंधित उपबंधों को सुदृढ़ करने की आवश्यकता समेत कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर केंद्रित था ।

विभिन्न पणधारियों और आम जनता के सदस्यों से फीडबैक अभिप्राप्त करने के लिए परामर्श पत्र का व्यापक प्रचार किया गया और कई उत्तर भी प्राप्त हुए । हम प्राप्त उत्तरों और आयोग के विचार का उल्लेख नीचे करेंगे ।

जब आयोग निर्वाचक विधियों के सुधार पर सरकार को अपनी सिफारिशें देने का कार्य कर रहा था तब **पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन** बनाम **भारत संघ शी-र्क वाली 2011** की रिट याचिका (सिविल) सं. 536, एक लोक हितवाद् (पी.आई.एल.) व-र्ा 2011 में उच्चतम न्यायालय में फाइल किया गया जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ राजनीति के अपराधीकरण के जोखिम से निपटने के लिए और गंभीर अपराधों से आरोपित लोगों को निवार्चन लड़ने से वर्जित करने के लिए न्यायालय से मार्गदर्शक सिद्धांत बनाने या अवसंरचना अधिकथित करने का अनुरोध किया गया था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने उपरोक्त उल्लिखित मामले में 16 दिसंबर, 2013 को आयोग द्वारा तैयार और

परिचालित परामर्श पत्र पर ध्यान दिया । यह समझते हुए कि आयोग निर्वाचक सुधार के सभी पहलुओं पर व्यापक रिपोर्ट देने में कुछ समय ले सकता है, न्यायालय ने पूर्वोक्त याचिका में तारीख 16 दिसंबर, 2013 के अपने आदेश में यह मत व्यक्त किया कि ''राजनीति के निरपराधीकरण और मिथ्या शपथपत्र फाइल करने पर निरर्हता से संबंधित मुद्दे पर पूर्विकता और तत्काल विचार करने की आवश्यकता है।'' और तदनुसार विधि आयोग से निम्नलिखित दो मुद्दों पर शीघ्र विचार करने का निदेश दिया, अर्थात्

> ''1. क्या निरर्हता दो-नसिद्धि पर जैसा इस समय है या न्यायालय द्वारा आरोपों की विरचना पर या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन अन्वे-नक अधिकारी द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने पर होनी चाहिए [परामर्श पत्र का मुद्दा सं. 3.1(ii), और
>
> 2. क्या लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 125क के अधीन मिथ्या शपथपत्र का फाइल करना निरर्हता का एक आधार होना चाहिए और यदि हां, तो शपथपत्र की सत्यता के न्यायनिर्णयन के लिए किस प्रकार की तकनीक अपनाए जाने की आवश्यकता है ? [परामर्श पत्र का मुद्दा सं. 3.5]''

तदनुसार मामले को तीन मास के लिए स्थगित किया गया जिसके भीतर विधि आयोग से पूर्वोक्त दो मुद्दों पर भारत सरकार को माननीय न्यायालय को अग्रेनित करने के लिए अपना जवाब प्रस्तुत करने की प्रत्याशा थी ।

II. परामर्श पत्र के फलस्वरूप प्राप्त उत्तर

विधि आयोग द्वारा तैयार परामर्श पत्र को रा-ट्रीय और राज्य स्तर के सभी रजिस्ट्रीकृत राजनैतिक दलों, संसद और राज्य विधान मंडल के सदनों, उच्च न्यायालयों, अधिवक्ता संगमों, निर्वाचन आयोग, महत्वपूर्ण रा-ट्रीय आयोगों और संस्थाओं के प्रमुखों, रा-ट्रीय विधि विश्वविद्यालयों, प्रमुख मीडिया व्यक्तियों, संगमों और सिविल सोसाइटी संगठनों और कई अन्य लोकहित भाव रखने वाले व्यक्तियों में प्रचारित किया गया । परामर्श पत्र को विधि आयोग के बेवसाइट पर भी अपलोड किया गया । अगस्त, 2013 तक प्राप्त 157 उत्तरों में से अधिकांश उत्तर विभिन्न सिविल सोसाइटी संगठनों और संगमों में दिलचस्पी रखने वाले व्यक्तियों से प्राप्त हुए । विभिन्न आयोगों में से केवल भारत के निर्वाचन आयोग ने उत्तर दिया । राजनैतिक दलों और सांसदों से परामर्श पत्र का उत्तर केवल एक रा-ट्रीय राजनैतिक दल अर्थात् भारतीय रा-ट्रीय कांग्रेस तक ही सिकुड़ कर रह गया और भारत की कल्याण पार्टी के रूप में एक रजिस्ट्रीकृत राजनैतिक दल ने परामर्श पत्र में उठाए गए मुद्दे पर अपना विचार भेजा । लोकसभा और राज्यसभा प्रत्येक से चार कुल मिलाकर आठ वर्तमान सांसदों ने परामर्श पत्र का उत्तर दिया ।

सिविल सोसाइटी ग्रुप, पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन ने यह सुझाव दिया कि निर्वाचन लड़ने के लिए निरर्हता से संबंधित विद्यमान उपबंधों को यह सुनिश्चित करने के लिए संशोधन किए जाने की आवश्यकता है कि निरर्हता न्यूनतम पांच व-र्ा या अधिक की अवधि के कारावास की कोटि में आने वाले गंभीर और जघन्य अपराधों पर न्यायालय द्वारा आरोपों की विरचना पर हो, जिसमें न्यायमूर्ति जे. एस. वर्मा कमेटी द्वारा तैयार की गई व्यापक सूची भी शामिल हो किंतु लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'आर.पी.ए.' कहा गया है) की प्रस्तावित धारा 8(1)(क) में पांच या अधिक व-र्ा के कारावास को लागू गंभीर और जघन्य अपराधों तक ही सीमित हो । इस परिदृश्य में केवल न्यायालय में फाइल और निर्वाचन से छह मास पूर्व न्यायालय द्वारा विरचित आरोपों वालो मामलों में ही अभ्यर्थी निरर्हता का पात्र होगा । यह प्रस्तावित सिफारिश किसी अपराध से दो-नसिद्ध और दो या अधिक व-र्ा के कारावास से दंडादि-ट होने पर निर्वाचन लड़ने से वर्जित करते हुए आर.पी.ए. की धारा 8(3) के अधीन यथाकथित निरर्हता के वर्तमान उपबंध के सह विस्तारी है ।

पब्लिक इंटरेस्ट ग्रुप ने आगे यह सुझाव दिया कि आपराधिक आरोपों का सामना कर रहे संसद और राज्य विधानमंडल के निर्वाचित प्रतिनिधियों की बावत, मामलों के समयबद्ध निपटान हेतु विशे-न त्वरित निपटान न्यायालयों की स्थापना के लिए आर.पी.ए.

की धारा 8 में नई उपधारा (5) अंतःस्थापित की जाए । यह उपधारा विशे-ा त्वरित निपटान न्यायालय द्वारा मामले के शीघ्र और समयबद्ध न्यायनिर्णयन से बचने के लिए जिसके परिणामस्वरूप उनकी दो-ासिद्धि और कारावास संभव है, चुनाव लड़ने से न्यायालय में उनके विरुद्ध लंबित दांडिक अपराध के मामलों वाले लोगों के लिए निवारक के रुप में कार्य कर सकती है । निर्वाचित प्रतिनिधि के विरुद्ध लंबित आरोपों की बावत मामले और जहां चुनाव परिणाम की घो-णा के पश्चात् आरोप विरचित किए गए हैं, वाले मामले भी, अभ्यर्थी के निर्वाचित घोि-त होने के ठीक पश्चात् सक्षम विशे-ा त्वरित निपटान न्यायालय के विचार के अधीन स्वतः आ जाने चाहिए । इन त्वरित निपटान न्यायालयों से उस तारीख से जिससे न्यायालय ने निर्वाचित प्रतिनिधि द्वारा किए गए अपराध का संज्ञान लिया है, छह मास के भीतर मामलों का निपटान करना अपेक्षित होगा । ऐसे मामलों में अपील न्यायालय आरंभिक न्यायालय के आदेश की तारीख से छह मास के भीतर अंतिम रूप से मामलों का निपटान करेंगे ।

वैकल्पिक प्रस्ताव का भी सुझाव दिया गया है कि जहां न्यूनतम पांच व-र् की अवधि के कारावास की कोटि में आने वाले गंभीर और जघन्य अपराधों के लिए आरोपित व्यक्ति को चुनाव लड़ने की अनुज्ञा दी जाए वहां यदि आरोप झेल रहा अभ्यर्थी सांसद/विधायक निर्वाचित हो जाता है तो संबद्ध व्यक्ति के विरुद्ध मामला समयबद्ध निपटान के लिए आर. पी. ए. की प्रस्तावित उपधारा 8(5) के अधीन विशे-ा त्वरित निपटान न्यायालय के अंतर्गत स्वतः आ जाएगा । यह ऐसे निर्वाचित प्रतिनिधि को लागू होगा जिसे निर्वाचन के पश्चात् न्यायालय द्वारा आरोपित किया गया है । निर्वाचित प्रतिनिधि को तब तक अपने कर्तव्य के निर्वहन की अनुज्ञा दी जानी चाहिए जब तक उसे त्वरित निपटान न्यायालय द्वारा उसे दो-ासिद्ध या दो-ासिद्ध और दंडित नहीं किया जाता ।

निर्वाचित प्रतिनिधि की दो-ासिद्धि के अंतिम हो जाने पर प्रतिनिधि को सदन के स्पीकर या पीठासीन अधिकारी द्वारा स्वतः निरर्हित कर दिया जाना चाहिए । यह स्प-ट किया जाता है कि निरर्हता ऐसे मामलों में भी लागू होगी जहां निर्वाचित प्रतिनिधि ने दो-ासिद्धि पर कोई पुनरीक्षण/ अपील फाइल नहीं की है ।

एसोसिएशन फार डेमोक्रेटिक (ए.डी.आर.) ने सिफारिश की है कि ऐसे व्यक्ति अधिक व-र् के कारावास से दंडनीय आपराधिक मामले का आरोप न्यायालय द्वारा विरचित किया गया है । विशे-ाकर, ऐसे अभ्यर्थी जिसके विरुद्ध हत्या, बलात्संग, अपहरण आदि जैसे गंभीर अपराधों के लिए आरोप विरचित किए गए हैं, को निर्वाचन लड़ने से रोका जाना चाहिए ।

ऐसे अभ्यर्थी और व्यक्ति जो नामांकन पत्र के साथ फाइल शपथपत्र में मिथ्या जानकारी देता है की सदस्यता के परिणाम के मुद्दे पर, मिथ्या शपथपत्र फाइल करने विशे-ाकर निरर्हता के लिए एक आधार बनाने के लिए विधि में कठोर परिणाम विहित करने की आवश्यकता पर एक राय है । निर्वाचन आयोग ने भी सुझाव दिया है कि धारा 125क को धारा 8(1) जो दंड की मात्रा पर ध्यान दिए बिना निरर्हता के लिए है, के अधीन उपबंधित अपराधों की सूची में सम्मिलित किया जाए । श्री पी. पी. राव, ज्ये-ठ अधिवक्ता द्वारा यह भी सुझाव दिया गया कि मिथ्या शपथपत्र फाइल करने को धारा 100 के अधीन निर्वाचन को अपास्त करने का आधार बनाया जाए ।

आयोग ने श्री टी. एस. कृ-णमूर्ति (भूतपूर्व मुख्य निर्वाचन आयुक्त जिसके निर्देशाधीन निर्वाचन आयोग द्वारा निर्वाचक सुधार पर 2004 की रिपोर्ट तैयार की गई थी), डा. एस. वाई. कुरेशी (भूतपूर्व मुख्य निर्वाचन आयुक्त), श्री एस. के. मेंदीरत्ता (भारत के निर्वाचन आयोग के परामर्शी-सह-विधिक सलाहकार) और प्रो. जगदीप एस. चोकर (ऐसोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म के मूल सदस्य) से भी विचार-विमर्श किया । उन सभी लोगों की सिफारिशों ने आयोग को अपनी सिफारिशें देने में काफी प्रभावित किया ।

III. रा-ट्रीय परामर्श

पूर्वोक्त परामर्श पत्र और इसके फलस्वरूप प्राप्त उत्तरों के आलावा, आयोग द्वारा 1 फरवरी, 2014 को नई दिल्ली में निर्वाचक सुधारों पर एक दिन की रा-ट्रीय संगो-ठी का आयोजन किया गया । ऐसी संक्षिप्त कालावधि जिसके भीतर आपराधिक पृ-ठभूमि के अभ्यर्थियों और मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के परिणाम पर निरर्हता के दो मुद्दों पर रिपोर्ट प्रस्तुत करनी थी, पर विचार करते हुए, परामर्श राजनीति के निरपराधीकरण और मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के परिणाम केवल दो विनिर्दि-ट मुद्दों तक सीमित था ।

अधिकतम भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए रा-ट्रीय संगो-ठी का प्रेस और मीडिया में व्यापक प्रचार किया गया तथा राजनैतिक दलों और अन्य प्रतिनिधियों को डाक और ई-मेल से आमंत्रण भेजकर आमंत्रित किया गया । अखिल भारतीय एन. आर. कांग्रेस (पांडिचेरी), आल झारखंड स्टूडेंट यूनियन पार्टी (झारखंड), बीजू जनता दल, कम्पयूनिस्ट पार्टी आफ इंडिया, कम्यूनिस्ट पार्टी आफ इंडिया (मार्क्सवादी), नेशनल कांग्रेस पार्टी, जे. एंड के. नेशनल पैंथर पार्टी, रा-ट्रीय लोकदल और तेलंगाना रा-ट्र समिति का प्रतिनिधित्व था । सभी रजिस्ट्रीकृत रा-ट्रीय और क्षेत्रीय दलों को आमंत्रित किया गया था फिर भी अधिकांश ने भाग नहीं लिया । रा-ट्रीय संगो-ठी आयोजित करने का मुख्य आशय यथासंभव विभिन्न पणधारियों से अनेक और भिन्न-भिन्न विचार प्राप्त करना और राजनैतिक व्यवस्था को चला रहे विभिन्न वर्ग के लोगों से दो मुद्दों पर विशि-ट राय प्राप्त करना था । यह इस व्यापक विश्वास पर आधारित था कि निर्वाचन सुधार बाहर से अधिरोपित होने के बजाय सदन के पटल से किया जाए । श्री फली एस. नरीमन के शब्दों में, परिवर्तन लाने के लिए, 'हमें उचित और सम्मानजनक काम करने के लिए अंदर के लोगों पर दबाव डालने हेतु बाहर के लोगों की आम राय पर भरोसा करना आवश्यक है ।'

संगो-ठी आरंभिक सत्र से आरंभ हुई और इसमें तीन तकनीकी सत्र थे । श्री न्यायमूर्ति (सेवानिवृत्त) बी. पी. जीवनरेड्डी (उच्चतम न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश और भारत के विधि आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष) जिसकी अध्यक्षता में 1999 में विधि आयोग द्वारा निर्वाचक सुधार पर 170वीं रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी और जो रिपोर्ट मुद्दे पर सभी पश्चात्वर्ती कार्य के लिए निर्देश आधार है, ने आरंभिक सत्र को संबोधित किया । आरंभिक समारोह के पश्चात् प्रथम तकनीकी सत्र में भारतीय राजनीति के बढ़ते अपराधीकरण और इससे निपटने के उपाय पर विचार केंद्रित था । श्री फली एस. नरीमन (ज्ये-ठ अधिवक्ता) ने आरंभिक विचार और मुद्दे उठाए और उस पर मूल्यवान सुझाव भी दिए । द्वितीय सत्र में दांडिक अपराधों के अभ्यर्थियों और विद्यमान सांसदों

और विधायकों के निरर्हता के लिए आपराधिक मामलों में विधिक प्रक्रिया का प्रक्रम अवधारित करने पर विचार केंद्रित था । श्री टी. आर. अन्ध्यार्जुना (ज्ये-ठ अधिवक्ता और भारत के भूतपूर्व महासालिसिटर) और श्री पी. पी. राव ने मुद्दे पर दो विपरीत परिदृश्य प्रस्तुत कर चर्चा को गति प्रदान किया । तृतीय सत्र नामांकन पत्र के साथ फाइल शपथपत्र में मिथ्या जानकारी देने के परिणामों के संबंध में था । श्री सोली जे. सोराबजी (ज्ये-ठ अधिवक्ता और भारत के भूतपूर्व महान्यायवादी) और श्री के. एन. भट (ज्ये-ठ अधिवक्ता) ने मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के मुद्दे पर अपने सुझाव दिए ।

उपरोक्त नामों के अलावा, संगो-ठी में बार, न्यायपीठ, सिविल सोसाइटी संगठन, हितबद्ध नागरिक, शिक्षाविद्, मीडिया और अन्य पणधारियों के कई अन्य प्रतिनिधियों के साथ-साथ डा. एस. वाई. कुरेशी (भूतपूर्व मुख्य निर्वाचन आयुक्त), श्री एस. के. मेदीरत्ता (भारत के निर्वाचन आयोग के परामर्शी-सह-विधिक सलाहकार), श्री के. एफ. विल्फ्रेड (मुख्य सचिव, भारत का निर्वाचन आयोग), श्री एच. के. दुआ (सांसद, राज्य सभा) श्री दिनेश द्विवेदी (ज्ये-ठ अधिवक्ता) ने भाग लिया और सब लोगों ने बहस और विचार-विमर्श में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया । सहभागियों ने कई सुझाव, आयाम, मताभिव्यक्ति और टिप्पणियां की और सभी को आयोग द्वारा तैयार की गई संगो-ठी कार्यसूची में सम्यक् रूप से अभिलिखित किया गया है ।

मोटे तौर पर, क्षितिज पर बिल्कुल विभाजित राय उभर कर सामने आई जहां एक ओर यह सुझाव गया कि लोकतंत्र में जनता का प्रतिनिधित्व करने के संदर्भ में व्यक्तिगत हित या चिन्ता, यदि कोई हो, का व्यापक लोकहित अर्थात् निर्वाचक लोकतांत्रिक प्रक्रिया की शुचिता और सत्यनि-ठा प्राप्त करने के लिए बलि चढ़ा दी जानी चाहिए और दूसरी ओर इस मत पर बल दिया कि जब तक व्यक्ति का विचारण और उसे दो-नसिद्ध नहीं किया जाता तब तक निर्दोनिता की उपधारणा के आपराधिक न्यायशास्त्र के कालपरीक्षित सिद्धांत को जोखिम में नहीं डाला जाना चाहिए या कम नहीं आंका जाना चाहिए ।

राजनीति के अपराधीकरण के मुद्दे पर, न्यायमूर्ति बी. पी. जीवन रेड्डी अपनी राय पर दृढ़ रहे कि यह उपबंध करते हुए अभ्यर्थियों की निरर्हता के क्षेत्र को बढ़ाया जाए कि ऐसे अभ्यर्थी जिसके विरुद्ध मृत्यु, आजीवन कारावास या दस व-र्ा (जुर्माने के साथ या बिना) से दंडनीय अपराध (भारतीय दंड संहिता या किसी अन्य अधिनियमिति के अधीन) के लिए आरोप विरचित किए गए हैं, निरर्हित हो जाएंगे बशर्ते ऐसे आरोप नामांकन पत्र की संवीक्षा की तारीख से छह मास पूर्व विरचित किए गए हों । उन्होंने निर्वाचनों की सूची प्रणाली को लागू करने का भी सुझाव दिया । सूची प्रणाली में

घोनित आपराधिक पृ-ठभूमि वाले अभ्यर्थियों की निर्वाचन क्षेत्रवार सूची का निर्वाचन आयोग द्वारा प्रकाशन शामिल होगा ।

न्यायमूर्ति रेड्डी ने विधिमान्य ढंग से नामनिर्दि-ट अभ्यर्थी और मतदान के दिन के प्रकाशन के बीच अवधि को कम करने का भी प्रस्ताव किया । उन्होंने यह राय व्यक्त की कि इन उपायों से अभ्यर्थियों और निर्वाचन क्षेत्र के बीच जोड़ को तोड़ा जा सकेगा जिससे मतदाताओं को प्रभावित करने की कम से कम गुंजाइस रहेगी ।

श्री फली एस. नरीमन ने यह कहा कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में विहित आपराधिक मामलों से संबंधित प्रक्रिया में सभी प्रश्नों के उत्तर हैं । उन्होंने मजिस्ट्रेट न्यायालय में पुलिस द्वारा धारा 173 के अधीन आरोपपत्र या रिपोर्ट फाइल करने पर निरर्हता से इनकार किया और दृढ़तापूर्वक सक्षम न्यायालय द्वारा आरोपों की विरचना पर निरर्हता की वकालत की । उन्होंने निरर्हता की संपूर्ण अवधारणा को बढ़ाने की आवश्यकता बताई और इस बात पर बल दिया कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया की शुचिता और सत्यनि-ठा को संवर्धित करने के लिए विधि को आगे बढ़ने की आवश्यकता है । उनकी राय में, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के भीतर पर्याप्त सुरक्षोपाय हैं जो मिथ्या अभियोजन की चिन्ताओं से निपटने के लिए पर्याप्त हो सकते हैं । श्री पी. पी. राव के अनुसार विश्वसनीयता लोकतंत्र की संस्थाओं का प्राण है । तदनुसार, ऐसा व्यक्ति जो आरोपों से घिरा है, को कार्य करने की अनुज्ञा नही दी जानी चाहिए क्योंकि यह संस्थाओं में लोगों की आस्था को क्षति पहुंचाता है । उन्होंने यह कहा कि कलंकित लोगों की उपस्थिति संस्थाओं की विश्वसनीयता को क्षीण करने का मुख्य कारण है, अतः यह बताया कि इसे फिर से वापस लाने का प्रयास करने का समय आ गया है । उन्होंने स्वीकार किया आपराधिक न्याय में बड़ा समय लगता है और दो-ासिद्धि या दो-ामुक्ति का निर्णय सुनाने के पूर्व कई विधायी निबंधनों से गुजरना पड़ता है । किंतु बदलते समय के साथ बदलती वास्तविकता की यह मांग है कि नए तरीके खोजे जाएं । इसी बात के आलोक में उन्होंने सक्षम न्यायालय द्वारा आरोपों की विरचना पर अभ्यर्थियों को निरर्हित करने का भी सुझाव दिया । बीजू जनता दल का प्रतिनिधित्व कर रहे श्री पिनाकी मिश्र ने अभिला-ी अभ्यर्थियों के आरोपों की विरचना पर निरर्हता का जोरदार समर्थन करते हुए यह राय व्यक्त की कि विद्यमान सदस्यों पर आरोप विरचित किए जाने पर स्वतः निरर्हता का अर्थ उस सीट के लिए पुनर्निवाचन होगा । उन्होंने सुझाव दिया कि विद्यमान सांसदों की निरर्हता तत्काल नहीं की जानी चाहिए क्योंकि निर्वाचनों के संचालन में काफी धन लगता है और घड़ी की सुई को पीछे घुमाना असंभव है और निर्वाचक अपराधों के मामलों की तरह सदस्यता को आस्थगित रखा जाना चाहिए । उन्होंने **इंदिरा गांधी** बनाम **राजनाराण** वाले मामले में भारत के उच्चतम न्यायालय के

अंतरिम आदेश का उदाहरण दिया । उनका यह सुझाव था न्यायालय को ऐसे अभ्यारोपित सांसदों के मामलों में शीघ्रता करनी चाहिए ।

सभी अन्य राजनैतिक दल के सदस्यों ने जिन्होंने संगो-ठी में भाग लिया, आरोपों की विरचना पर निरर्हता लागू किए जाने का घोर विरोध किया । शिरोमणि अकाली दल ने मुद्दे पर अपने लिखित उत्तर में यह बताया कि आर. पी. ए. के विद्यमान उपबंध राजनैतिक क्षेत्र में आपराधिक पूर्ववृत्त वाले लोगों का प्रवेश रोकने के लिए पर्याप्त हैं, इस प्रकार किसी संशोधन की आवश्यकता नहीं है । आरोपों की विरचना पर होने वाली निरर्हता का राजनैतिक क्षेत्र में विरोध के द्वारा हावी होने का विचार स्वाभाविक है क्योंकि ''राजनैतिक दुश्मनी'' के कारण इसका दुरुपयोग होने का भय है ।

श्री टी. आर. अन्ध्यार्जुना ने भी भिन्न कारणों से आरोपों की विरचना पर निरर्हता के लागू होने का विरोध किया । उन्होंने इस तथ्य को समझाने के लिए आर. पी. ए. की धारा 8 के विधायी इतिहास को उजागर किया कि जब इसका अधिनियमन किया गया तो निरर्हता का मानदंड दो-ासिद्धि था न कि आरोपों की विरचना । यह स्वीकार करते हुए कि प्रथम संसद की नैतिक अवधारणा ''आपराधिक'' पूर्ववृत्त के कई निर्वाचित प्रतिनिधियों के साथ वर्तमान स्थिति से काफी भिन्न थी फिर भी उन्होंने बल दिया कि दो-ी साबित न होने तक निर्दो-ा होने की हमारी स्थिति न्यायशास्त्रीय अवधारणा को न-ट नहीं किया जाना चाहिए । शपथपत्रों में आपराधिक पूर्ववृत्त सहित जानकारी का प्रकटन मतदाताओं के लिए सुविज्ञ विकल्प चुनने के लिए पर्याप्त हैं । डा. एस. वाई. कुरेशी और श्री एस. के. मेंदीरत्ता ने इस बावत इंगित किया कि दो-ी न पाए जाने तक निर्दो-ा होने की अवधारणा का न्यायशास्त्र व्यवहार में काफी हद तक स्थान से हट गया है क्योंकि हमारे देश में लाखों विचाराधीन कैदी है ।

एक सहभागी का यह बहुमूल्य सुझाव था कि यदि कोई व्यक्ति निर्वाचन के लिए अभ्यर्थी होने या संसद् सदस्य होने से निरर्हित हो जाता है तो उसे कतिपय कालावधि के लिए दल में किसी पद को धारित करने से मना किया जाना चाहिए । दल में निरर्हित व्यक्ति को पद धारित करने की अनुज्ञा देने से उसी सदस्य द्वारा दल के अन्य सदस्य को ह्विप (चेतावनी) जारी करने की संभावना है और अंततः अप्रत्यक्ष रूप से वह लक्ष्य प्राप्त कर सकता है जो वह प्रत्यक्षतः नही प्राप्त कर सकता । आगे यह सुझाव दिया गया कि ऐसा कोई राजनैतिक दल जो निरर्हित व्यक्ति को कोई पद देता है उसे गैर-मान्यताप्राप्त ठहराया जाना चाहिए ।

मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के पहलू पर, श्री सोली जे. सोराबजी ने बल दिया कि निर्वाचनों के मामले में मिथ्या शपथपत्रों का फाइल किया जाना एक गंभीर मुद्दा है

जिसका निर्वाचन की शुचिता से प्रत्यक्ष संबंध है । उन्होंने कहा कि उच्चतम न्यायालय ने ऐसे अभ्यर्थी के बारे में 'सही' जानकारी प्रदान करने हेतु सुविज्ञ विकल्प निर्धारित करने के लिए मतदाता के अधिकार को सवीकार किया जो निर्वाचनों में निर्वाचन लड़ रहा है । अतः, मिथ्या शपथपत्र फाइल करने को निश्चित रूप से निरर्हता का आधार बनाया जाना चाहिए, विशे-ाकर ऐसे निर्वाचित अभ्यर्थियों के मामले में जिन्होंने शपथपत्र में मिथ्या जानकारी प्रस्तुत की । यह स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचनों के लिए आवश्यक है जो हमारे संविधान का आधारभूत ढांचा है । उन्होंने सुझाव दिया कि सी. वी. सी. को शपथपत्रों में जानकारी की सत्यता सुनिश्चित करने के लिए जानकारी की संपरीक्षा का कार्य सौंपा जाए । सी. वी. सी. मिथ्या जानकारी पाये जाने पर निर्वाचन आयोग को रिपोर्ट भेजेगा । निर्वाचन आयोग निर्वाचित अभ्यर्थी की सुनवाई करने के पश्चात् भारत के रा-ट्रपति को रिपोर्ट भेजेगा और रा-ट्रपति रिपोर्ट और सामग्री की परीक्षा करने के पश्चात् निर्वाचित अभ्यर्थी को निरर्हित कर सकेगा जिससे कि वह मिथ्या शपथपत्र फाइल कर प्राप्त किए गए अपने विजय के फल का उपभोग न कर सके ।

श्री के. एन. भट ने कहा कि विधि आयोग की 170वीं रिपोर्ट (1999) के पश्चात् कानूनी पुस्तक में धारा 33क और 125क को अंतःस्थापित किया गया फिर भी मिथ्या शपथपत्र नैमित्तिक रूप से फाइल किए जा रहे हैं । न्यायलय प्रक्रिया में विलंब जिसके परिणामस्वरूप आरोपों की विरचना और दो-ासिद्धि के बीच असम्यक् रूप से काफी समय लगता है और धारा 125क के अधीन केवल छह मास का दंड उपबंध को उपहासा-पद बनाता है । उन्होंने धारा 125क में "किसी निर्वाचन में चुने जाने के आशय से" शब्दों का लोप करने का सुझाव दिया क्योंकि उनकी राय में मिथ्यापन हमेशा जानबूझकर होता है । उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि शपथपत्र फाइल करने के पश्चात् आक्षेप फाइल करने के लिए एक सप्ताह का समय दिया जाना चाहिए और तत्पश्चात रिटर्निंग अधिकारी को विधिमान्य साक्ष्य के आधार पर अभ्यर्थिता नामंजूर करने का अधिकार होना चाहिए । उन्होंने आगे यह सुझाव दिया कि धारा 125क को भ्र-ट आचरण के रूप में धारा 123 में सम्मिलित किया जाए क्योंकि निर्वाचक अर्जी उसके पश्चात् फाइल की जा सकती है और धारा 100 के अधीन इस आधार पर निर्वाचन अपास्त किया जा सकता है ।

जहां कुछ अन्य सहभागियों ने भी मिथ्या शपथपत्र फाइल करने को आर. पी. ए. की धारा 123 के अधीन भ्र-ट आचरण बनाने और इस प्रकार निर्वाचन को अपास्त करने का आधार अपनाने का सुझाव दिया वहीं इसका इस आधार पर अन्य लोगों द्वारा असहमति जताई गई कि निर्वाचन अर्जी फाइल करने की परिसीमा समाप्त होने के पश्चात् असत्यता का पता चलने से दो-ाकर्ता परिणामों से बचने में समर्थ हो जाएगा ।

श्री नृपेन्द्र मिश्र, पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन (माननीय उच्चतम न्यायालय के लंबित पी. आई. एल. में याची) ने भी यह सुझाव दिया कि धारा 125क के अधीन दंड को बढ़ाकर जुर्माने के किसी विकल्प के बिना दो व-र्ा किया जाए । उन्होंने सिफारिश की कि सी. वी. सी. द्वारा अन्वे-ाण करने के बजाय रिटर्निंग अधिकारी द्वारा मुख्य निर्वाचन आयुक्त को निर्देश किए जाने पर शपथपत्र की असत्यता के मुद्दे पर सुनवाई और विनिश्चय करने की अधिकार मुख्य निर्वाचन आयुक्त को दिया जाना चाहिए । तथापि, इसका अन्य सहयोगियों द्वारा विशे-ाकर नामांकन और मतदान के बीच केवल 14 दिनों का समयान्तराल होने के कारण अव्यवहार्य मानते हुए विरोध किया गया । इसके अतिरिक्त, उन्होंने सुझाव दिया कि धारा 125क के अतिक्रमण की निरर्हता तीन व-र्ा होनी चाहिए जैसा धारा 10क में है । डा. एस. वाई. कुरेशी ने यह भी कहा कि मिथ्या शपथपत्र फाइल करने लिए निरर्हता निर्वाचित अभ्यर्थी तक सीमित नहीं होनी चाहिए बल्कि समानतः ऐसे सभी अभ्यर्थियों के लिए होनी चाहिए जिन्हें मिथ्या जानकारी देने पर दो-ाी पाया गया हो । श्री एस. के. मेंदीरत्ता ने वर्तमान मुद्दे पर निर्वाचन आयोग के प्रस्तावों को प्रस्तुत किया अर्थात् धारा 125क के अधीन दंड कम से कम दो व-र्ा होना चाहिए न कि छह मास और धारा 125क को धारा 8(1) के अधीन आने वाले अपराधों में सम्मिलित किया जाए जिससे कि दंडादेश की मात्रा पर ध्यान दिए बिना उसके अधीन दो-ासिद्ध निर्वाचित या अन्यथा अभ्यर्थी को निरर्हित किया जा सके ।

आयोग ने इस रिपोर्ट में अपनी सिफारिशें तैयार करते समय रा-ट्रीय संगो-ठी में व्यक्त विभिन्न मतों पर विचार किया । वहीं उसने पूरे दिन बैठक में उभरे विभिन्न बात को मान्यता प्रदान की कि कलंकित राजनीतिज्ञों की निरर्हता से संबंधित विधि को वर्तमान वास्तविकताओं के अनुकूल बनाने के लिए विस्तृत करने की आवश्यकता है । ऐसा विस्तृत औचित्य कि क्यों ऐसे विस्तार की आवश्यकता है और ऐसे विस्तार की सही व्याप्ति की चर्चा अगले तीन अध्यायों में की गई है ।

IV. सुधार की आवश्यकता

अ. स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचन

''यदि वे लोग जो निर्वाचित होते हैं, योग्य, चरित्रवान और सत्यनि-ठ हैं तो वे त्रुटिपूर्ण संविधान के होते हुए श्री सर्वोत्तम कार्य करने में समर्थ होंगे । यदि उनमें इन सब का अभाव होगा तो संविधान देश की सहायता नहीं कर सकता । कुल मिलाकर, संविधान मशीन की तरह एक निर्जीव वस्तु है । यह उन व्यक्तियों से जो इसे नियंत्रित करते हैं और इसे लागू करते हैं, प्राण प्राप्त करता है, और भारत को आज ऐसे ईमानदार लोगों के समूह से अधिक किसी बात की आवश्यकता नहीं जिनमें अपने से अधिक देश में हित की दृढ़ता हो..... इसके लिए दृढ़ चरित्र, दूरदृ-टि और ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है जो छोटे समूह या क्षेत्र के लिए संपूर्ण देश के हितों का बलिदान न करने वाला हो.... हम केवल यह आशा कर सकते हैं कि देश में ऐसे व्यक्तियों की बहुतायत हो ।''

– डा. राजेन्द्र प्रसाद, अध्यक्ष, भारत की संविधान सभा, तारीख 26 नवंबर, 1949 द्वारा सदन में संविधान पारित करने का प्रस्ताव प्रस्तुत करने के पूर्व व्यक्त विचार ।

शासन के रूप में लोकतंत्र भारत के संविधान निर्माताओं द्वारा परिकल्पित संवैधानिक स्कीम का केंद्रीय आधार था । संविधान सभा चर्चाओं और उनके व्यक्तिगत लेखों से एकत्रित साक्ष्य के अनुसार अंतिम लक्ष्य प्रत्येक भारतीय नागरिक को राजनैतिक प्रक्रिया में पणधारी के रूप में सशक्त करना था । इस प्रयोजन के लिए, नागरिक को अपने मत के माध्यम से संसद और अपने संबद्ध राज्य विधानसभाओं का सदस्य चुनने की शक्ति दी गई, ऐसी प्रणाली जो निर्माताओं के विश्वास के अनुसार यह सुनिश्चित करेगी कि प्रभावशाली और प्राधिकारवान पदों पर केवल सर्वाधिक योग्य अभ्यर्थियों को ही चुना जाएगा । इस प्रकार, ऐसे लोग जो अंतिम संप्रभु थे, से अपनी वैधता प्राप्त कर प्रतिनिधि सरकार संविधान द्वारा परिकल्पित लोकतांत्रिक प्रणाली का सार थी । कालांतर में, भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा घोनित करते हुए संशोधन से उन्मुक्त करते हुए इसे संविधान का ''आधारभूत ढांचे'' का भाग अभिनिर्धारित किया गया ;

''यह युक्तियुक्त संविवाद की परिधि से परे है कि यदि इस आधार पर कि वे संविधान के आधारभूत ढांचे का भाग गठित करते हैं, संविधान का कोई गैर-संशोधनीय कोई लक्षण है तो वह यह है कि भारत एक लोकतंत्रात्मक गणरज्य है ।''[1]

[1] इंदिरा गांधी बनाम राजनारायण और अन्य, 1975 सप्ली. एस. सी. सी. 1,252 पैरा 664.

इस प्रकार, लोकप्रिय संप्रभुता पर आधारित प्रतिनिधि सरकार के मोडल का स्वभाव नियिमत स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचन कराने की प्रतिबद्धता है । स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचन का महत्व दो कारकों – करणत्व, ऐसे व्यक्ति जो लोगों पर शासन करेंगे का चयन करने में इसकी केंद्रीय भूमिका और अंतरस्थता, जो लोकप्रिय इच्छा की वैध अभिव्यक्ति से उत्पन्न होता है । लोकतंत्रात्मक शासन में स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचनों के महत्व पर बल देते हुए उच्चतम न्यायालय ने **मोहिन्दर सिंह गिल** बनाम **मुख्य निर्वाचन आयुक्त**[2] वाले मामले में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया -

> *''लोकतंत्र लोगों की सरकार है । यह एक सतत सहभागी प्रचालन है न कि क्रांतिकारी सावधिक प्रयोग । साधारण व्यक्ति एकजुट होकर मतदान में अपना मत देकर इस प्रतिनिधित्व के माध्यम से अपने संसद् की सामाजिक संपरीक्षा करता है और राजनैतिक विकल्प अपनाता है । यद्यपि सहभागी सरकार का फूल मुश्किल से पूरी तरह से विकसित होता है, फिर भी लोकप्रिय सरकार की न्यूनतम विश्वसनीयता प्रत्येक अवधि के पश्चात् विश्वास के नवीकरण के लिए लोगों से अपील करना है । अतः संवैधानिक बाध्यता के रूप में वयस्क मताधिकार और साधारण निर्वाचन हमारी राजनैतिक प्रक्रिया है । यह अभिनिर्धारित करने के लिए थोड़े बहस की आवश्यकता है । ससंदीय प्रणाली की आत्मा वयस्क मताधिकार पर आधारित सावधिकतः स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचन है यद्यपि सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की और अधिक मांग हो सकती है ।''*

स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचन सुनिश्चित करने और निर्माताओं की दूरदृ-टि को प्रोत्साहित करने के लिए, संसद् ने लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (इसमें इसके पश्चात् 'आर.पी.ए.' कहा गया है) अधिनियमित किया जो अन्य बातों के साथ-साथ संसद् और राज्य विधानमंडलों की सदस्यता की अर्हता और निरर्हता का उपबंध करता है, भ्र-ट आचरण का अधिकथन करता है जो विधि द्वारा दंडनीय है, ऐसे निर्वाचनों के संबंध में और उससे या उसके संबंध में उद्भूत विवादों के समाधान के लिए अन्य अपराधों का सृजन करता है । इस प्रकार, विधान बनाने का मूलाधार स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचनों के अनुकूल व्यवस्थित अवसंरचना का सृजन करना है । इस अवसंरचना में अव्यक्त कतिपय अर्हताएं और निरर्हताएं विहित करने की आवश्यकता है जो लोक पद धारकों के लिए क्रमशः आवश्यक या अनुप्रयुक्त समझे जाते हैं ।

यह स्वयंसिद्ध है कि समाज के आपराधिक तत्व अर्थात् जो ऐसी विधियां तोड़ने के अभियुक्त हैं जो उनके पूर्ववर्तियों ने प्रवृत्त किया और सांसद् और विधायक होते हुए

---

[2] (1978) 1 एस. सी. सी. 405, 424 पैरा 23.

जिसे प्रवृत्त करना उनका दायित्व है, निर्माताओं की दूरदृ-टि, भारतीय लोकतंत्र की प्रकृति और विधि के नियम के प्रतिकूल होगा । उच्चतम न्यायालय ने **के. प्रभाकरण** बनाम **पी. जयराजन**[3] वाले मामले में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया -

> *''जो विधि तोड़ता है, उसे विधि नहीं बनाना चाहिए । सामान्यतः कतिपय अपराधों के लिए दो-नसिद्धि पर निरर्हता अधिनियमित कर प्राप्तव्य प्रयोजन आपराधिक पृ-ठभूमि वाले व्यक्तियों को राजनीति में प्रवेश करने से और शासन में सशक्त धड़ा होने से रोकना है । आपराधिक पृ-ठभूमि वाले व्यक्ति निर्वाचन की प्रक्रिया को दू-नित करते हैं क्योंकि उन्हें किसी प्रकार का कोई रोक नहीं है और निर्वाचन में सफलता प्राप्त करने के लिए अपराधिता में लिप्त होने से कोई प्रतिबंध नहीं है ।''*

डा. राजेन्द्र प्रसाद ने संविधान सभा के अपने समापक संबोधन में स्प-ट रूप से कहा -

> *''विधि प्रदाता से, बौद्धिक उपस्कर किंतु इससे भी अधिक स्वतंत्र रूप से कार्य करने हेतु संतुलित मत व्यक्त करने की क्षमता और सबसे अधिक जीवन की मूलभूत बातों के प्रति सच्चा होना जिसे एक शब्द में - चरित्रवान होना कहा जा सकता है, अपेक्षित है ।''*[4]

सेंटर फार पब्लिक इंटरेस्ट लिटिगेशन बनाम **भारत संघ**[5] (सी.वी.सी. वाला मामला) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने लोक पद पर नियुक्ति के लिए अर्हता के मानदंड का मुद्दा उठाया । 'संस्था' की अखंडता कायम रखने और संरक्षित करने हेतु सदस्यों के लिए यह अनिवार्य बनाते हुए, यह अधिकथित किया गया कि न केवल अभ्यर्थी की वांछनीयता किंतु कार्यालय की 'संस्थागत अखंडता' जिसका वह शासन करने जा रहा है, पर लोक पद की नियुक्ति में विचार किया जाना चाहिए । सभी लोक पदों को लागू इस निर्णय का भाव यह है कि ऐसे पद के अभ्यर्थी के लिए सत्यनि-ठा के उच्चतम मानक रखना ही केवल अनिवार्य नहीं है किंतु स्वतंत्र रूप से संस्था की अखंडता भी संरक्षित की जाए । यह महत्वपूर्ण है कि वे दो-नसिद्ध हैं या नहीं, राजनीति में आपराधिक तत्वों के होने से निःसंदेह बाद वाले को तो कलंकित ही करता है चाहे पहले वाले को न करता हो ।

---

[3] (2005) 1 एस. सी. सी. 754, 780 पैरा 54.

[4] जिल्द XI सी. ए.डी. (26 नवंबर, 1949)

[5] (2011) 4 एस.सी.सी. 1.

आ. राजनीति में अपराधीकरण का विस्तार

भारतीय गणतंत्र के आरंभ में संविधान के प्रारुपकारों और सांसदों के सर्वोत्तम अभिप्राय के बावजूद, स्वयं 1952 के प्रथम साधारण निर्वाचन से अपराध और राजनीति के बीच संबंध का भय व्यापक रूप से जताया गया था । व-र्ा 1922 में काफी पूर्व श्री सी. राजगोपालाचारी ने स्वतंत्रता से पच्चीस व-र्ा पूर्व वर्तमान स्थिति का पूर्वानुमान किया था, जब उन्होंने अपनी जेल डायरी में यह लिखा : निर्वाचन और उनके भ्र-टाचार, अन्याय और धन का प्रपीड़न और प्रशासन की अदक्षता जीवन को नरक बना देगी जब हमें स्वतंत्रता प्रदान की जाएगी ।"[6]

यह दिलचस्प है कि प्रेक्षकों ने यह पाया कि व-र्ा 1970 में इस संबंध की प्रकृति में परिवर्तन आया । पहले की तरह, राजनीतिज्ञों का आपराधिक नेटवर्क से संदेहास्पद संबंध होने के बजाय व्यापक आपराधिक पृ-ठभूमि वाले व्यक्तियों ने राजनीति में आना आरंभ कर दिया ।[7] व-र्ा 1993 में वोहरा कमेटी रिपोर्ट और पुनः 2002 में संविधान के कार्य का पुनर्विलोकन करने वाले रा-ट्रीय आयोग की रिपोर्ट से इस बात की पुि-ट हुई । वोहरा समिति रिपोर्ट ने आपराधिक नेटवर्क के शीघ्र विकास का उल्लेख किया जिससे अफसरशाहों, राजनीतिज्ञों और मीडिया व्यक्तियों के संपर्क की सुस्प-ट प्रणाली विकसित हुई ।[8] व-र्ा 2002 में एन. सी. आर. डब्ल्यू. सी. द्वारा प्रकाशित परामर्श पत्र में यह भी कहा गया कि अब अपराधी स्वयं विधायक और मंत्री बनकर सत्ता पर प्रत्यक्ष पहुंच प्राप्त करना चाहते हैं ।[9]

भारत संघ बनाम **एशोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म**[10] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय, जिसके द्वारा शपथपत्र के माध्यम से अभ्यर्थियों के आपराधिक अभिलेख को प्रकट करने की अपेक्षाकर उसका विश्ले-ाण संभव बनाया गया, से आम जनता को पूर्व रिपोर्टों में व्यक्त ऐसे संप्रेक्षणों की विधिमान्यता के मात्रात्मक निर्धारण का अवसर मिलता है । ऐसे विश्ले-ाण के परिणाम का काफी महत्व होता है ।

---

[6] किशोर गांधी, इंडिया डेट विद् डेस्लिनी : रणबीर सिंह चौधरी सम्मान में सी. राजगोपालाचारी के अनुसार, प्रथम संस्करण (एलाइड पब्लिशर्स 2006) 133.

[7] मिलन वै-णव, 'द मार्केट फार क्रिमिनलिटी : मनी, मसिल्स एंड इलेक्सन इन इंडिया (2010) <http://casi.sas.upenn.edu/system/files/Market+for+criminality+-+aug+2011.pdf> accessed 14 January 2014

[8] भारत सरकार, 'वोहरा कमिटी रिपोर्ट ऑन क्रिमिलाइजेशन ऑफ पोल्टिक्स, गृह मंत्रालय (1993) <http://indiapolicy.org/clearinghouse/notes/vohra-rep.doc> accessed 13 January, 2014.

[9] विशे-ाकर निर्वाचनों और सुधार विकल्पों के संबंध में राजनैतिक दलों के कार्यकरण के पुनर्विलोकन पर परामर्श पत्र (2002) - <http://;aw,om/nic/ncrwc/finalreport/v2b1-8.htm> accessed 13 January, 2014

[10] (2002) 5 एस.सी. सी. 294.

वर्ष 2004 से दस वर्षों में, राष्ट्रीय या राज्य निर्वाचनों से लड़ रहे अभ्यर्थियों का 18% (62847 में से 11063) के विरुद्ध लंबित आपराधिक मामले हैं । 5253 या लगभग इन मामलों के आधे में (कुल विश्लेषित अभ्यर्थियों का 8.4%) आरोप गंभीर दांडिक अपराधों के हैं जिनमें हत्या, हत्या का प्रयास, बलात्संग, महिलाओं के विरुद्ध अपराध, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 या महाराष्ट्र संगठित अपराध का नियंत्रण अधिनियम, 1999 के अधीन मामले सम्मिलित हैं जिन पर दोषसिद्धि पर पांच वर्ष या अधिक का कारावास आदि होगा । 152 अभ्यर्थियों पर 10 या अधिक गंभीर मामले, 14 अभ्यर्थियों पर 40 या अधिक ऐसे मामले और 5 अभ्यर्थियों पर उनके विरुद्ध 50 या अधिक मामले लंबित थे ।[11]

गंभीर मामलों वाले 5253 अभ्यर्थियों पर एक साथ उनके विरुद्ध 13984 गंभीर आरोप थे । इन आरोपों में से, 31% हत्या और अन्य हत्या से संबंधित अपराध के मामले थे, 4% बलात्संग और महिलाओं के विरुद्ध अपराध के मामले थे, 7% अपहरण और व्यपहरण के मामले थे, 7% लूट और डकैती, 14% शासकीय मुद्रा सहित कूटरचना और जालसाजी तथा 5% निर्वाचनों के दौरान विधि तोड़ने से संबंधित अपराध के मामले थे ।[12]

आपराधिक पृष्ठभूमि लड़ रहे अभ्यर्थियों तक सीमित नहीं है बल्कि विजेताओं में भी हैं । वर्ष 2004 से 2013 तक जीत गए विश्लेषित 8882 में से 5253 अभ्यर्थी जिनके विरुद्ध गंभीर दांडिक आरोप है, में से 1187 अर्थात् 13.5% निर्वाचन जिसके लिए वे लड़े थे जीत गए । कुल मिलाकर, गंभीर और गैर गंभीर दोनों आरोपों सहित 2497 (विजेताओं का 28.4%) के विरुद्ध 9993 आपराधिक मामले लंबित थे ।

वर्तमान लोकसभा में 30% या 162 विद्यमान सांसदों के विरुद्ध आपराधिक मामले लंबित है जिनमें से लगभग आधे अर्थात् 76 के विरुद्ध गंभीर आपराधिक मामले हैं । समयानुसार, लंबित आपराधिक मामलों वाले सांसदों की वृद्धि हो रही है । वर्ष 2004 में 24% लोकसभा सांसदों के विरुद्ध आपराधिक मामले लंबित थे जो बढ़कर 2009 के निर्वाचन में 30% हो गया ।[13]

---

[11] एसोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म, प्रेस विज्ञप्ति - टेन इयर ऑफ इलेक्शन वाच : चुनाव पर विस्तृत रिपोर्ट, 'क्राइम एंड मनी' (2013) 1, <http://adrindia.org/sites/default/files/Press%20Note%20-%20Ten%20years%20of%20Election,%%20Crime%20and%20Money_0.pdf> accessed 14 January, 2014 त्रिलोचन शास्त्री 'टूवार्डस डीक्रिमिलाइजेशन ऑफ इलेक्शन एंड पोलिटिक्स', इकोनोमिक एंड पोलिटिकल विक्ली 4 जनवरी, 2014

[12] त्रिलोचन शास्त्री 'टूवाडस डीक्रिमिलाइजेशन ऑफ इलेक्शन एंड पोलिटिक्स', इकोनोमिक एंड पोलिटिकल विक्ली 4 जनवरी, 2014

[13] एसोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म, 'राष्ट्रीय स्तर पर लोक सभा 2009 का विश्लेषण' (2009) <http://adrindia.org/sites/default/files/0.9%20final%20report%20_%20lok%20sabha%202009.pdf> प्राप्त 13 जनवरी, 2014

लंबित मामलों वाले 4032 विद्यमान विधायकों में से 31% या 1258 के साथ स्थिति सभी राज्यों में एक जैसी है जिसमें से लगभग आधे विधायकों के विरुद्ध गंभीर मामले हैं ।[14] कुछ राज्यों में आपराधिक अभिलेख वाले विधायकों की प्रतिशतता काफी अधिक है : उत्तर प्रदेश में, 47% विधायकों के विरुद्ध आपराधिक मामले लंबित हैं ।[15] कई सांसद और विधायक बहुल प्रकार के आपराधिक आरोपों के अभियुक्त हैं । उदाहरणार्थ, उत्तर प्रदेश के एक निर्वाचन क्षेत्र में एक विधायक के विरुद्ध हत्या से संबंधित 14 मामले सहित 36 आपराधिक मामले लंबित हैं ।[16]

इस आंकड़े से यह स्प-ट है कि भारत में संसद् और राज्य विधानसभा स्तर पर लगभग एक-तिहाई निर्वाचित अभ्यर्थियों के विरुद्ध किसी न किसी प्रकार का आपराधिक कलंक है । आंकड़ा अन्यत्र यह इंगित करता है कि एक-पांचवें विधायक के विरुद्ध मामले लंबित हैं जिनमें उनके निर्वाचन के समय न्यायालय द्वारा उनके विरुद्ध आरोप विरचित किए जाने की प्रक्रिया आरंभ की गई ।[17] और अधिक विक्षुब्धकारी नि-क-र्ा यह है कि लंबित आपराधिक मामलों वाले विजेताओं की प्रतिशतता ऐसी पृ-ठभूमि से हीन अभ्यर्थियों की तुलना में काफी अधिक है । जहां औसतन ''स्वच्छ'' छवि वाले केवल 12% अभ्यर्थी जीतते हैं वहीं किसी प्रकार के आपराधिक छवि वाले 23% अभ्यर्थी निर्वाचन जीतते हैं । इसका यह अर्थ है कि अपराध के आरोपी अभ्यर्थी वस्तुतः 'स्वच्छ' अभ्यर्थियों से अधिक अच्छा प्रदर्शन निर्वाचनों में करते हैं । संभवतः परिणामस्वरूप, आपराधिक मामले वाले अभ्यर्थियों को दूसरी बार टिकट देने का रुझान है ।[18] राजनैतिक दल न केवल आपराधिक पृ-ठभूमि वाले अभ्यर्थियों का चयन करते हैं बल्कि इस बात के भी संकेत हैं कि बेदाग प्रतिनिधि भी बाद में आपराधिक गतिविधियों में लिप्त हो जाते हैं ।[19] इस प्रकार, राजनीति के अपराधीकरण की घटना व्याप्त है और इसका शीघ्र उपचार किया जाना अनिवार्य है ।

इ. राजनैतिक दलों की भूमिका

राजनैतिक दल हमारे लोकतंत्र की केंद्रीय संस्था है ; *संपूर्ण सांविधानिक स्कीम की प्राणवायु ।*[20] राजनैतिक दल एक नाली का कार्य करती है जिसके द्वारा लोगों के हितों

---

[14] ए.डी.आर., (टिप्पण 11)

[15] एसोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म, प्रेस विज्ञप्ति -आपराधिक विश्ले-ाण, उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव के नव निर्वाचित विधायकों का वित्तीय और अन्य विवरण, 2012 <http://adrindia.org/download/file/fid/2668> प्राप्त 13 जनवरी, 2014.

[16] वही

[17] वैश्नव (टिप्पण 7) 10

[18] शास्त्री (टिप्पण 12) 3

[19] क्रिस्टोफ जैफ्रेलट, 'इंडियन डेमोक्रेसी : रुल आफ ला आन ट्रायल (2002) 1(1) इंडिया रिव्यू 77.

[20] सुभा-न चंद्र अग्रवाल ब. इंडियन नेशनल कांग्रेस और अन्य, (2013) सी.आई.सी. 8047 <http://www.rti.india.gov.in/cic_decision/CIC_SM_C_2011_000838_M_111223.pdf> प्राप्त 4 फरवरी, 2014

वाले मुद्दों का प्रतिनिधित्व संसद् में होता है क्योंकि राजनैतिक दल प्राइवेट नागरिकों और सार्वजनिक जीवन के बीच केंद्रीय भूमिका निभाते हैं इसीलिए वे भी मुख्यतः राजनीति के अपराधीकरण की वृद्धि के उत्तरदायी है ।

कई संप्रेक्षकों ने स्प-टीकरण दिया कि क्यों दल दागदार पृ-ठभूमि वाले अभ्यर्थियों का चुनते है । उपरोक्त चर्चानुसार, अध्ययन से पता चलता है कि आपराधिक अभिलेख वाले अभ्यर्थियों ने निर्वाचनों में बेहतर प्रदर्शन किया और यह लगता है कि अपराधियों को निर्वाचक फायदा प्राप्त होता है ।[21] चूंकि निर्वाचक राजनीति कई कारकों का संयोजन है, इसलिए प्रायः अभ्यर्थी की जातीयता या अन्य चिह्नक जैसे मुद्दे आपराधिक अभिलेख से उसको हुई ख्यातिगत हानि पर अभिभावी हो सकते हैं ।

इसके अतिरिक्त, निर्वाचक राजनीति व्यापकतः धन और निधि जो वह प्राप्त करता है पर आश्रित है । अर्थशास्त्रियों द्वारा कई अध्ययनों से यह पता चला है कि अकेले 2009 के साधारण निर्वाचन में अभ्यर्थियों और पक्षकारों ने लगभग $ 3 विलियन निर्वाचन अभियान पर खर्च किए ।[22] भारी निर्वाचन व्यय का परिणाम काफी अधिक मात्रा में तथाकथित 'काला धन' है ।[23] विधि आयोग ने पहले भी विधिक सीमा से काफी अधिक निर्वाचन व्ययों पर चिन्ता व्यक्त की थी ।[24] अतः, अभियान निधिकरण राजनैतिक दलों की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण चिंता है । चूंकि आपराधिक अभिलेखों वाले अभ्यर्थियों के पास प्रायः काफी धन होता है इसलिए आपराधिक आरोपों के कलंक के नकारात्मक प्रभाव को भारी अभियान के संसाधनों द्वारा जीता जा सकता है ।[25] इस प्रकार चाहे किसी अभ्यर्थी का आपराधिक अभिलेख हो, वह अन्य चिह्नकों के सकारात्मक प्रभाव के कारण निर्वाचनों में अच्छा प्रदर्शन कर सकते हैं । इस प्रकार कुल मिलाकर आपराधिक अभिलेख वाला अभ्यर्थी कई तरह से राजनैतिक दलों के लिए फायदा पहुंचाने वाला साबित हो सकता है । वह न केवल धन, श्रमिक और अन्य फायदे जो किसी दल को सफल अभियान के लिए सहायक हो सकते हैं, भारी मात्रा में सुनिश्चित करता है बल्कि भारी ''विजय प्राप्त करने की क्षमता'' भी रखता है ।[26] परिणामतः कई अध्ययनों ने स्थानीय अपराधियों की सदस्यता और राजनैतिक दलों के

---

[21] बी. दत्ता एंड पी. गुप्ता, 'हाउ डू इंडियन वोटर्स रिस्पांड टू कंडीडेट्स विद क्रिमिनल चार्ज : इवीडेन्स फ्राम द 2009 लोक सभा निर्वाचन (एम.पी.आर.ए. पेपर सीरिज 38417, 2012)

[22] टममन, हीथर और हरि कुमार, 'इंडिया नेशनल इलेक्शन स्प्रेड विलियन एराउन्ड', द न्यूयार्क टाइम्स (14 मई, 2009)

[23] वैकग्राउन्ड रिपोर्ट आन इलेक्टोरल रिफार्म, विधि और न्याय मंत्रालय (2010)

[24] वैकग्राउन्ड रिपोर्ट (टिप्पण 23)

[25] दत्ता एंड गुप्ता, (टिप्पण 21)

[26] दत्ता एंड गुप्ता, (टिप्पण 21)

खजाने में धन के बहाव के बीच प्रत्यक्ष संबंध को उजागर किया ।[27] इसे रिपोर्ट में बाद में विस्तार से विचार किया गया है ।

इसके अतिरिक्त, दलों के लिए अभ्यर्थी चयन प्रक्रिया में आपराधिक अभिलेख वाले अभ्यर्थियों को घोनित करने का एक अन्य कारक है । चूंकि भारत के राजनैतिक दलों में दल के भीतर लोकतंत्र का काफी अभाव है और अभ्यर्थी का विनिश्चय प्रायः दल के अग्रणी नेतृत्व द्वारा लिया जाता है इसलिए आपराधिक अभिलेख वाले राजनीतिज्ञ प्रायः स्थानीय कार्यकर्ताओं और दल के संगठन द्वारा संवीक्षा से बच निकलते हैं ।[28]

इस प्रकार, अपराध-राजनीति संबंध की यह मांग है कि निरर्हता और निर्वाचित प्रतिनिधियों पर कोई अन्य अनुशास्ति से अधिक वृहत् समाधान का पता लगाया जाए । राजनैतिक दलों के कार्यकरण और दलों के आंतरिक क्रियाकलापों को विनियमित करने में सजग विधिक अंतर्दृन्टि की अपेक्षा है । यह रिपोर्ट राजनैतिक दलों के संगठनात्मक पदों को विनियमित करने के सुधारों पर भी सुझाव देगी ।

केंद्रीय सूचना आयोग द्वारा **सुभान चंद्र अग्रवाल**[29] वाले मामले में उद्धृत भारत के विधि आयोग ने अपनी 170वीं रिपोर्ट में कतिपय विचार व्यक्त किए हैं जो हमारे लोकतंत्र में राजनैतिक दलों की स्थिति का उल्लेख करने के लिए काफी प्रासंगिक हैं :

> *''राजनैतिक दल ही सरकार का गठन करते हैं, संसद् में भाग लेते हैं और देश का शासन चलाते हैं । इसलिए राजनैतिक दलों के कार्यकरण में वित्तीय पारदर्शिता और जवाबदेही तथा आंतरिक लोकतंत्र लागू करना आवश्यक है । ऐसा राजनैतिक दल जो अपने कार्यकरण में लोकतांत्रिक सिद्धांतों का सम्मान नहीं करता, से देश के शासन में उन सिद्धांतों का सम्मान करने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती । आंतरिक कार्यकरण में निरंकुशता और बाह्य कार्यकरण में लोकतंत्र नहीं हो सकता है ।''*[30]

इसके अलावा, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 29क(5) जो, राजनैतिक दलों के कार्यकरण को विनियमित करती है, के अधीन राजनैतिक दलों से विहित विधि के अनुसार ''सच्ची आस्था'' और ''भारत के संविधान के प्रति नि-ठा'' रखने की अपेक्षा है ।[31] इसके अतिरिक्त, नि-क-र्ा पर पहुंचने के लिए कि राजनैतिक दल लोक

---

[27] वै-णव (टिप्पण 7)

[28] वै-णव (टिप्पण 7)

[29] सुभान चंद्र अग्रवाल (टिप्पण 20).

[30] 'निर्वाचक विधि का सुधार', 170वीं रिपोर्ट भारत का विधि आयोग, 1999.

[31] धारा 29क(5), द रिप्रेजेन्टेशन ऑप पीपुल एक्ट, 1951

प्राधिकारी हैं, सी. आई. सी. ने कई संवैधानिक उपबंधों को भी निर्दि-ट किया जो राजनैतिक दलों को अधिकार और बाध्यताएं प्रदान करते हैं ।[32] इस प्रकार, राजनैतिक दल मात्र कोई अन्य संगठन नहीं है बल्कि संवैधानिक अधिकार और बाध्यताएं रखने वाली महत्वपूर्ण संस्थाएं हैं ।

एन. सी. आर. डब्ल्यू. सी. ने राजनैतिक दलों के कार्यकरण पर ऐसे ही चिंता को उजागर किया और अपराध-राजनीति के संबंध से निपटने के लिए राजनैतिक दलों के कुछ कार्यकरण को विनियमित करने के लिए एक पृथक विधि की सिफारिश की ।[33] यह भी राय व्यक्त किया कि आपराधिक आरोप पर दो-ानसिद्धि की दशा में, प्रतिनिधि के निरर्हता के अलावा राजनैतिक दल को उत्तरदायी ठहराया जाए और किसी तरह से उदाहरणार्थ दल को मान्यता रहित कर अनुशास्ति अधिरोपित किया जाए ।

यद्यपि आर. पी. ए. विद्यमान विधायक या अभ्यर्थी को कतिपय आधारों पर निरर्हित करता है फिर भी दल के संगठन के भीतर पदों पर नियुक्तियों को विनियमित करने की कोई व्यवस्था नहीं है । राजनीतिक दल भारतीय लोकतंत्र में केंद्रीय भूमिका अदा करते हैं । अतः, राजनेता को विधायक के रूप में निरर्हित किया जा सकता है किंतु अपने दल के भीतर उच्च पद पर बना रह सकता है, इस प्रकार भी महत्वपूर्ण सार्वजनिक भूमिका अदा करता रहता है जिसके लिए उसे विधि द्वारा अयोग्य समझा गया है । दो-ानसिद्ध राजनेता दल को नियंत्रित कर और विधानमंडल में परोक्ष् अभ्यर्थी को खड़ा कर विधि बनाने की प्रक्रिया को प्रभावित करते रहते हैं । उच्च समादेश द्वारा नियंत्रित दलों पर आधारित लोकतंत्र में, अपराध-राजनीति को तोड़ने की प्रक्रिया विधायकों की शुचिता से परे काफी विस्तारित है और राजनैतिक दलों की शुचिता को भी समावि-ट करता है ।

इस प्रकार किसी सुधार प्रस्ताव में राजनैतिक दलों की सुसंगत सिफारिशों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए चूंकि सुधार की आवश्यकता इस संदर्भ में भी महत्वपूर्ण है। यह सुझाव दिया जाता है कि राजनैतिक दलों को दल संगठन के भीतर किसी पद पर ऐसे किसी व्यक्ति को नियुक्त करने या पद पर बने रहने की अनुज्ञा देने से बचना चाहिए । यदि व्यक्ति के पास लोक पद धारण करने की आवश्यक गुणता में कमी होना पाया जाए । अतः, ऐसी विधिक अर्हताएं जो किसी व्यक्ति को दल के बाहर पद धारण करने से निवारित करती है, को क्रियान्वयन दल के भीतर भी होना चाहिए । समग्र सुधार के लिए, इस सिफारिश पर विचार किया जाना चाहिए । परामर्श पत्र से संबंधित

---

[32] अनुसूची X , भारत का संविधान, 1951

[33] अध्याय 4, जिल्द 1, 'भारतीय संविधान के कार्यकरण पुनर्विलोकन का रा-ट्रीय आयोग' <http://lawmin.nic.in/finalreport/volume1.htm> वेबसाइट पर 4 फरवरी, 2014

सभी मुद्दों पर भारत सरकार को प्रस्तुत की जाने वाली रिपोर्ट में विस्तृत रीति से इस पर विचार किया जाएगा ।

ई - विद्यमान विधिक अवसंरचना

विधितः, राजनीति में अपराधियों के प्रवेश को कतिपय निरर्हताएं विहित कर पूरा किया जाता है जो किसी व्यक्ति को निर्वाचकों में खडे होने से या संसद् या विधानसभा में पद ग्रहण करने से करती है । संसद् के सदस्यों की अर्हताएं संविधान के अनुच्छेद 84 में सूचीबद्ध है, निरर्हताएं अनुच्छेद 102 के अधीन उपबंधित हैं । राज्य विधान सभाओं के सदस्यों के लिए तत्समान उपबंध अनुच्छेद 173 और 191 में है ।

अनुच्छेद 102 यह उल्लेख करता है कि कोई व्यक्ति संसद् के किसी सदन का सदस्य चुने जाने के लिए और सदस्य होने के लिए निरर्हित होगा यदि वह कोई लाभ का पद धारण करता है, यदि वह विकृतचित्त है और सक्षम न्यायालय की ऐसी घो-णा विद्यमान है, यदि वह अनुन्मोचित दिवालिया है, यदि वह भारत का नागरिक नहीं है और यदि वह संसद् द्वारा बनाई गई किसी अन्य विधि द्वारा निरर्हित है ।

संसद् आर. पी. ए. के माध्यम से आगे संसद् या विधानसभा की सदस्यता की अर्हताएं और निरर्हताएं विहित करती है । अधिनियम की धारा 8 के अधीन कतिपय अपराधों की सूची है जिससे यदि कोई व्यक्ति उनमें से किसी के लिए दो-नसिद्ध ठहराया जाता है तो वह संसद् या विधानसभा का सदस्य के रूप में निर्वाचित या बने रहने से निरर्हित हो जाता है । विशे-नकर धारा 8(1) के अधीन अपराधों की सूची है जिसके अधीन दो-नसिद्धि दंडादेश या जुर्माने की मात्रा पर ध्यान दिए बिना अभ्यर्थी को निरर्हित करती है - इनमें कतिपय निर्वाचक अपराध, विदेशी विनिमय अधिनियम, 1973, स्वापक ओ-नधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985, भ्र-टाचार निवारण अधिनियम, 1988, आदि के अधीन अपराध सम्मिलित हैं । धारा 8(2) में अन्य अपराधों की सूची है जिसके अधीन दो-नसिद्धि का परिणाम केवल निरर्हता है यदि कारावास छह मास या अधिक का है । धारा 8(3) अवशि-टकारी उपबंध है जिसके अधीन यदि कोई अभ्यर्थी किसी अपराध से दो-नसिद्ध और दो व-र्ा या अधिक के कारावास से दंडित किया जाता है तो वह निरर्हित हो जाता है ।[34] निरर्हता दो-नसिद्धि की तारीख से लागू होती है और उन्मुक्ति की तारीख से छह व-र्ा की और अवधि तक जारी रहती है ।

[34] धारा 8(4) जो पहले विद्यमान थी, लिली थामस बनाम भारत संघ, (2013) 7 एस. सी. सी. 653 वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिखंडित की गई ।

आर. पी. ए. द्वारा अधिकथित दो-ासिद्धि पर निरर्हता स्कीम स्प-टतः इस सिद्धांत को कायम रखती है कि ऐसा व्यक्ति जिसके कतिपय प्रकृति का आपराधिक क्रियाकलाप किया, जनता का प्रतिनिधि बनने के अयोग्य है । ऐसे आपराधिक क्रियाकलाप जिसका परिणाम धारा 8(1) के अधीन दंड का ध्यान किए बिना निरर्हता है, निर्वाचक अपराध या रा-ट्रीय ध्वज का अपमान जैसे लोकपद से संबंधित हैं या आतंकवादी विधियों के अधीन अपराधों जैसे गंभीर प्रकृति के हैं । दूसरी ओर, धारा 8(3) यह परिकल्पित करता है कि ऐसा कोई अपराध जिसके लिए न्यूनतम दंड दो व-र्ा है गंभीर प्रकृति का होने के कारण निरर्हता योग्य है । दोनों दशाओं में, यह स्प-ट है कि आर. पी. ए. यह अधिकथित करता है कि गंभीर आपराधिक अपराधों का किया जाना व्यक्ति को निर्वाचनों के लिए खड़ा होने या जनता का प्रतिनिधि बना रहने के अयोग्य ठहराता है । यह परिकल्पित था कि ऐसा निर्बंधन लोक पद धारण करने से आपराधिक तत्वों को निर्वाचित करने और तद्द्वारा प्रतिनिधि सरकार की सत्यनि-ठा संरक्षित करने का आवश्यक कानूनी निवारक उपबंध करेगा ।

तथापि, राजनीति में अपराधीकरण के विस्तार के उपरोक्त विवरण से यह स्प-ट है कि आर. पी. ए. की धारा 8 का प्रयोजन पूरा नहीं हो रहा है । ऐसे अपराधीकरण के परिणाम और संभावित सुधार उपाय जिन पर विचार किया जाना है, पर अगले अध्याय में चर्चा की जाएगी ।

अभ्यर्थियों द्वारा शपथपत्रों के फाइल करने की बाबत, किसी रा-ट्रीय या राज्य विधान सभा निर्वाचनों के अभ्यर्थी से निर्वाचन आचरण नियम, 1961 से संलग्न प्ररुप 26 के आकार का शपथपत्र जिसमें उनकी आस्तियो, दायित्वों शैक्षिक अर्हताओं, उनके विरुद्ध आपराधिक दो-ासिद्धियां जिसके परिणामस्वरूप निरर्हता नहीं होती है, और ऐसे मामले जिनमें उनके विरुद्ध दो या अधिक व-र्ा से दंडनीय किसी अपराध के लिए आपराधिक आरोप विरचित किए गए हैं, से संबंधित जानकारी होगी, प्रस्तुत करना अपेक्षित है ।

ऐसी जानकारी देने की असफलता पर, जानकारी का छिपाया जाना या मिथ्या जानकारी देना आर. पी. ए. की धारा 125क के अधीन अपराध है । तथापि, धारा 125क के अधीन दंडादेश केवल 6 मास की अवधि का कारावास है और अपराध आर. पी. ए. की धारा 8(1) या (2) के अधीन सूचीबद्ध नहीं है । अतः, धारा 125क के अधीन दो-ासिद्धि से अभ्यर्थी निरर्हित नहीं हो जाता है । न ही भ्र-ट आचरण जो धारा 100 के अधीन निर्वाचन को अपास्त करने का आधार है, के रूप में सूचीबद्ध मिथ्या प्रकटन का अपराध है ।

अतः, वर्तमान में मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के अपराध का कोई परिणाम नहीं है जिसके परिणामस्वरूप यह आचरण प्रचलित है ।

उ. इस अवसंरचना का निर्वचन करने वाले उच्चतम न्यायालय के निर्णय

न्यायपालिका ने कई प्रारंभिक निर्णयों द्वारा राजनीति के अपराधीकरण की इस जोखिम को समाप्त करना चाहा और पूर्वोक्त उपबंधों के आधार पर प्राथमिकतः सरकार और निर्वाचन आयोग को अनुवर्ती निदेश दिए । विशे-तः, स्वच्छ राजनीति की ईप्सा करने वाले उच्चतम न्यायालय के आदेशों को तीन प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है : पहला ऐसे विनिश्चय जो निर्वाचक प्रक्रिया में पारदर्शिता लाते हैं । दूसरा, जो लोकपद धारकों में अधिक उत्तरदायित्व पैदा करते हैं, तीसरा, ऐसे निर्णय जो सार्वजनिक जीवन से भ्र-टाचार उखाड़ फेंकना चाहते हैं । नीचे विचार-विमर्श में व्यापक रूप से विचार नहीं किया गया है ; यह मात्र राजनीति के निरपराधीकरण के प्रश्न से संबंधित उच्चतम न्यायालयीय न्यायशास्त्र का रुझान दर्शाता है ।

भारत संघ बनाम **एशोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्मस**[35] (इसके पश्चात् ए. डी. आर. कहा गया है) वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने निर्वाचन आयोग को संसद् या राज्य निर्वाचन लड़ रहे प्रत्येक अभ्यर्थी से शपथपत्र पर कतिपय जानकारी मांगने का निदेश दिया । विशे-तकर, अपराधीकरण के प्रश्न से सुसंगत वि-तय पर यह अधिदेश दिया कि ऐसे जानकारी के अंतर्गत यह सम्मिलित हो कि क्या अभ्यर्थी पहले किसी दांडिक अपराध से दो-तसिद्ध/दो-तमुक्त/उन्मोचित रहा है और यदि दो-तसिद्ध है, तो दंड की मात्रा, और क्या नामांकन फाइल करने के छह मास पूर्व, अभ्यर्थी दो या अधिक व-र्ा के कारावास से दंडनीय किसी अपराध वाले किसी लंबित मामले में दो-ती है और जिसमें आरोप विरचित किया गया है या न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया है । ऐसा निदेश देने का संवैधानिक औचित्य यह था कि मतदाता को ऐसे अभ्यर्थियों का पूर्ववृत्त जानने का मूल अधिकार है जो लोकपद के लिए निर्वाचन लड़ रहे हैं । न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जानने का यह अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) के अधीन सभी नागरिक को गारंटीकृत वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के सार्थक अधिकार का मुख्य घटक और मूलाधार है ।

पुनः **पीपुल्स यूनियन फार सिविल लिवर्टीज** बनाम **भारत संघ**[36] (इसके पश्चात् 'पी. यू. सी. एल.' कहा गया है) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने लोक प्रतिनिधित्व (तीसरा संशोधन) अधिनियम, 2002 की ऐसी धारा 33ख को अभिखंडित किया जो ए. डी. आर. वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के पूर्व आदेश के प्रचालन की परिधि को सीमित करता था । विनिर्दि-ट रूप से यह उपबंधित था कि केवल ऐसी

---

[35] (2002) 5 एस. सी. सी. 294.

[36] (2003) 2 एस. सी. सी. 549.

जानकारी जो संशोधन अधिनियम के अधीन प्रकट की जानी अपेक्षित थी, अभ्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत करनी होगी न कि किसी आदेश या निदेश के अनुसरण के अधीन कोई जानकारी । व्यावहारिकतः, इसका यह अभिप्राय है कि आस्तियां और दायित्व, शैक्षिक अर्हताएं और ऐसे मामले जिसमें वह दांडिक अपराधों से दो-नमुक्त या उन्मोचित हुआ है, को प्रकट नहीं करना होगा । इसे अभिखंडित करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि न्यायालय के पूर्व आदेश को अकृत करने वाला उपबंध स्वतंत्र वाक् और अभिव्यक्ति के मूल अधिकार के एक संघटक मतदाताओं के जानने के अधिकार का अतिलंघन करता है और स्वतंत्र तथा नि-पक्ष निर्वाचनों में बाधा डालता है जो संविधान के आधारभूत संरचना का भाग है । यह इन दो आदेशों के अनुसरण में है कि निर्वाचनों में सभी अभ्यर्थियों के आपराधिक पूर्ववृत्त लोक अभिलेख के वि-नय हैं और मतदाताओं को सुविज्ञ विकल्प चुनने की अनुज्ञा प्रदान करता है ।

वहीं उच्चतम न्यायालय ने निर्वाचित पद धारण करने वालों के लिए अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य करने की ईप्सा की है । **लिली थामस** बनाम **भारत संघ**[37] वाले मामले न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि आर.पी.ए. की धारा 8(4) जो ऐसे सांसदों और विधायकों को, जो दो-नसिद्ध हैं, ऐसी दो-नसिद्धि के अपील के विरुद्ध निपटान तक सदस्य के रूप में पद पर बना रहकर सेवा करने की अनुज्ञा देती है, असंवैधानिक है । दो औचित्य दिए गए - पहला,संसद के पास आवेदकों की सदस्यता के लिए आवेदकों और विद्यमान सदस्यों की निरर्हता के लिए भिन्न-भिन्न उपबंध करने सक्षमता नहीं है, दूसरा, हमारे संविधान का अनुच्छेद 101(3) और 190(3) जो यह अधिदेश देता है कि सदस्य कास्थान निरर्हता पर स्वतः रिक्त हो जाएगा के आलोक में वह तारीख जिसे निरर्हता आरंभ होती है, आस्थगित करना असंवैधानिक है ।

पुनः **पीपुल्स यूनियन फार सिविल लिबर्टीज** बनाम **भारत संघ**[38] (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'नोटा' कहा गया है) वाले मामले में न्यायालय नेयह अभिनिर्धारित किया कि निर्वाचन आचरण नियम,1961 के उपबंध जो किसी व्यक्ति की पहचान, यदि वह मत नहीं रजिस्टर करना चाहता है, अनिवार्यतः प्रकट करना अपेक्षित है, उसकी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अतिक्रमण होनेके कारण असंवैधानिक है । अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में किसी अभ्यर्थी को चुनने या सभी अभ्यर्थियों को अस्वीकार करने की स्वतंत्रता का उसका अधिकार सम्मिलित है । उक्त नियम मनमना है कि प्रकटन की समरूप अपेक्षा तब नहीं है जब सकारात्मक मत रजिस्टर किया जाए और आर. पी.ए. में उपबंधित निर्वाचनों की गोपनीयता के लिए ऐसी आवश्यकता इसके प्रकट अतिक्रमण के कारण

---

[37] (2013) 7 एस. सी. सी. 653.

[38] (2013) 10 एस. सी. सी. 1.

अवैध है और स्वतंत्र और निपक्ष निर्वाचनों के लिए निर्णायक के रूप में व्यापक रूप से इसकी मान्यता प्रदान की गई है । इस प्रकार, किसी भी कारण से अपने निर्वाचन क्षेत्र से मतदाताओं के लिए अभ्यर्थियों के प्रति अपना असंतो-न व्यक्त करने को स्वीकार कर उच्चतम न्यायालय के आदेश का पदस्थ पदधारकों के लिए अधिक उत्तरदायी बनाने में काफी महत्व है । जब इसके प्रभाव को **लिली थामस** वाले मामले के विनिश्चय से मिलाया जाए तो यह स्प-ट है कि इन निर्णयों का वास्तविक प्रभाव यह है कि ससंद् में फंसे आपराधिक तत्वों के लिए अपनी स्थिति बनाए रखना और अधिक दुर्भर हो जाएगा ।

तीसरा, उच्चतम न्यायालय ने अपराध और राजनीति के बीच संबंध को अलग करने के संस्थागत सुधार के कई कदम उठाए । **विनीत नारायण** बनाम **भारत संघ**[39] वाले मामले में जो ''जन डायरी'' के रूप में ज्ञात अभिगृहीत कतिपय दस्तावेजों से उद्भूत अन्वे-ण मामलों में केंद्रीय अन्वे-ण ब्यूरो की नि-क्रियता के संबंध में था तथा जिससे राजनीतिज्ञों, नौकरशाहों और अपराधियों के बीच संबंध का पता चला और जो विधि विरुद्ध स्त्रोतों से धन प्राप्त करते थे, उच्चतम न्यायालय ने देश की सतर्कता और अन्वे-ण साधित्र के प्रत्यक्ष व्यापक संस्थागत सुधार का निदेश देने के लिए परमादेश जारी करने की शक्ति का प्रयोग किया । उच्चतम न्यायालय ने भारत सरकार को केंद्रीय सकर्तता आयोग (सी.वी.सी.) को कानूनी प्रास्थिति प्रदान करने, सी.बी.आई. के स्वतंत्र कार्यकरण के लिए आवश्यक शर्तें अधिकथित करने, प्रवर्तन निदेशालय (ई.डी.) के निदेशक के लिए चयन प्रक्रिया विनिर्दि-ट करने, स्वतंत्र अभियोजन अभिकरण के सृजन की आवश्यकता और ऐसे मामलों में जहां राजनीतिज्ञ-नौकरशाह- अपराधी का संबंध प्रत्यक्ष हो, कार्रवाई के समन्वय के लिए उच्च शक्ति प्राप्त केंद्रक अभिकरण की स्थापना का निदेश दिया । इस प्रकार, ये कदम लोकपद धारकों के आपराधिक मामलों के अन्वे-ण और अभियोजन को पूरी तरह से नवीकृत करने के आदेश थे ।

भ्र-टाचार वाले मामलों में लोक सेवकों का अभियोजित करने के लिए मंजूरी अभिप्राप्त करने में विलंब की समस्या को सुलझाते हुए, **विनीत नारायण** वाले मामले में ऐसी मंजूरी के लिए तीन मास की समय सीमा उपवर्णित की । इस निदेश की पुन्टि उच्चतम न्यायालय द्वारा **सुब्रमणियम स्वामी** बनाम **मनमोहन सिंह**[40] वाले मामले में की गई जहां न्यायालय ने अभियोजन के लिए ऐसी मंजूरी चार मास की वर्धित समय सीमा की समाप्ति पर संबद्ध अधिकारी द्वारा मंजूर की गई समझी जाएगी, का उपबंध कर भ्र--टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 को नवीकृत करने का सुझाव दिया । इन और

[39] (1998) 1 एस. सी. सी. 226.

[40] (2012) 3 एस. सी. सी. 65.

अन्य मामलों[41] में, उच्चतम न्यायालय ने शासन के स्रोत में आपराधिक क्रियाकलाप, विशे-ाकर भ्र-टाचार के अभियोजन को सुकर बनाने का प्रयास किया ।

उच्चतम न्यायालय ने मूल अधिकारों को प्रवृत्त कराने की अपनी शक्ति के सकारात्मक प्रयोग में और निर्वाचनों से जुड़े कानूनी उपबंधों के अपने निर्वचन के माध्यम से स्वच्छ राज व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए लम्बे कदम उठाए,आपराधिक तत्वों के लिए लोकपद पर प्रवेश करने और पद से उन्हें यदि वे पहले से सत्ता में हैं, हटाने के व्यवहार्य तंत्र संरक्षित कर भारी अवरोध पैदा किए । आयोग यह प्रशंसा करता है कि ये विनिश्चय नवीनतम विकास का संज्ञान लेकर व्यापक आधार पर सुधार किए जाने के लिए स्वयं विधि की आवश्यकता को प्रदर्शित करते हैं । कई समितियों और आयोगों द्वारा पहले भी ऐसे ही मत व्यक्त किए गए हैं जिन्होंने निर्वाचक प्रक्रियाओं और निरर्हताओं को लागू होने वाली विधियों में मूलभूत परिवर्तन की सिफारिश की है । ऐसी रिपोर्टों के संक्षिप्त सर्वे को नीचे भाग में दर्शाया गया है ।

ऊ. सुधार की सिफारिशे करने वाली पूर्व रिर्पोट

निर्वाचक सुधार का मुद्दा पहले भी कई आयोगों और समितियों की चिंता का वि-नय रहा है । इस रिपोर्ट में सुसंगत सुझाव देने की दृ-टि से इन निकायों के महत्वपूर्ण नि-क-र्षों और सिफारिशों का लेखा-जोखा इस भाग में दर्शित है ।

व-र्ा 1999 में, विधि आयोग ने अपनी 170वीं रिपोर्ट में आर. पी. ए. की धारा 8ख को जोड़ने की सिफारिश की । इस धारा में कतिपय अपराध (निर्वाचक अपराध, निर्वाचन से प्रभावित होने वाले अपराध अर्थात् भारतीय दंड संहिता की धारा 153क, 505 और मृत्यु या आजीवन कारावास द्वारा दंडनीय गंभीर अपराध),सम्मिलित किए गए जिनकी बाबत आरोप विरचित होने पर निर्वाचन लड़ने से किसी व्यक्ति को निरर्हित करना पर्याप्त था । प्रस्तावित उपबंध आगे आरोप विरचित करने पांच व-र्ा की अवधि या दो-ामुक्ति तक जो भी घटना पहले हो, निरर्हता का अनुबंध करता है । इसने आर.पी. ए. की धारा 4क के अधीन नामांकन पत्र में ऐसी (और अन्य) जानकारी के आज्ञापक प्रकटन की भी सिफारिश की । इस सुझाव को पहले ही 24 अगस्त, 2002 से आर. पी. ए. की धारा 33क में सम्मिलित कर लिया गया है ।

संविधान के कार्यकरण के पुनर्विलोकन के रा-ट्रीय आयोग (2002) ने भी कतिपय अपराधों (पांच व-र्ा या अधिक के अधिकतम कारावास से दंडनीय) के लिए आरोप की

[41] देखिए उदाहरणार्थ, वी. एस. अचुथानंद ब. आर. बालाकृ-णन पिल्लै, (2011) 3 एस. सी.सी. 317. लोक सेवकों के भ्र-टाचार मामलों के विचारण में विलंब के मुद्दे पर

विरचना को निरर्हता का मानदंड बनाने का दृढ़ निश्चय लिया था । तथापि, इनकी सिफारिशों में कतिपय उपांतरण थे । पहला, आयोग का यह प्रस्ताव था कि यह निरर्हता आरोपों की विरचना की तारीख से एक व-र्ा के पश्चात् लागू होगी और यदि उस अवधि के भीतर स्प-ट नहीं होता तो विचारण की समाप्ति तक जारी रहेगा । दूसरा, यदि व्यक्ति न्यायालय द्वारा किसी अपराध का दो-ाी ठहराया जाता है और छह मास या अधिक के कारावास से दंडित किया जाता है तो निरर्हता की अवधि दंडादेश की अवधि के दौरान लागू रहेगी और उसके पश्चात् छह व-र्ा तक जारी रहेगी । तीसरा, यदि व्यक्ति जघन्य अपराध का दो-ासिद्ध है तो आयोग ने किसी राजनैतिक पद पर लड़ने से स्थायी वर्जना की सिफारिश की । चौथा, उसने सिफारिश की कि संभाव्य अभ्यर्थियों के विरुद्ध विरचित आरोपों की वैधता का निर्धारण करने और मामलों का कठोर समय सीमा के भीतर निपटान करने के लिए उच्च न्यायालय (उच्चतम न्यायालय को सीधे अपील) स्तर का विशे-ा न्यायालय गठित किया जाए । अंततः, उसने ऐसे राजनैतिक दलों का रजिस्ट्रीकरण और मान्यता रद्द करने की सिफारिश की जो जानबूझकर आपराधिक पूर्ववृत्त वाले अभ्यर्थियों को उतारते हैं ।

भारत के निर्वाचन आयोग ने भी समय-समय पर निर्वाचन विधि के सुधार के लिए कई सिफारिशें की । अगस्त, 1997 में इसने आर. पी. ए. की धारा 8 के अधीन आने वाले मामलों में दो-ासिद्धि को प्रकट करने वाला शपथपत्र फाइल करने का आदेश दिया । सितंबर,1997 में, आयोग ने ऐसे किसी व्यक्ति को जिसे दो-ासिद्धि किया गया है और छह मास या अधिक के कारावास से दंडित किया गया है, अधिरोपित दंडादेश की कुल अवधि और अतिरिक्त छह व-र्ाों की अवधि के लिए निर्वाचन लड़ने से निरर्हित करने हेतु आर. पी. ए. की धारा 8 का संशोधन की सिफारिश करते हुए प्रधानमंत्री को संबोधित करते हुए पत्र लिखा । व-र्ा 1998 में यह सिफारिश करने के अलावा अपने उपरोक्त सुझाव को दोहराया कि ऐसे व्यक्ति को निरर्हित किया जाना चाहिए जिसके विरुद्ध पांच व-र्ा या अधिक के कारावास से दंडनीय अपराध के लिए आरोप विरचित किए गए हैं । आयोग ने स्वीकार किया कि विधि की दृ-टि से व्यक्ति को निर्दो-ा माना जाता है जब तक वह दो-ाी न साबित हो जाए ; इसके बावजूद उसने यह कहा कि संसद् और विधान मंडल शी-र्ास्थ विधि बनाने वाले निकाय है और ऐसे सत्यनि-ठ और ईमानदार व्यक्तियों से मिलकर गठित होना चाहिए जिनकी आम जनता की नजरों में अच्छी ख्याति हो, ऐसा व्यक्ति नहीं जो गंभीर अपराध का अभियुक्त हो । इसके अतिरिक्त, भ्र-ट आचरण के आधार पर निरर्हता के प्रश्न पर आयोग ने प्रत्येक अभियुक्त व्यक्ति की निरर्हता की अवधि विनिश्चित करने की अपनी शक्ति बनी रहने का समर्थन किया क्योंकि छोटे से लेकर बड़े भ्र-टाचार के असंख्य भ्र-टाचार के मामलों को एक जैसा मानदंड लागू नहीं हो सकता ।

इसके आगे भ्र-ट आचरण के आधार पर निरर्हता के प्रश्न विनिश्चित करने में लगने वाले काफी विलंब को ध्यान में रखते हुए, आयोग ने यह सिफारिश की कि निर्वाचन आयोग उच्च न्यायालय से निर्णय की प्राप्ति के ठीक पश्चात् इस बात पर न्यायिक सुनवाई करे और तत्समय लागू चक्राकार मार्ग को अपनाने के बजाए रा-ट्रपति को अपनी राय दे । व-र्ा 2004 में पुनः राजनीति के निरपराधीकरण को रोकने की सिफारिश की गई । उसने पांच व-र्ा या अधिक के कारावास से दंडनीय अपराधों की बावत आरोपों की विरचना पर निर्वाचन लड़ने से व्यक्तियों को निरर्हित करने के अपने पूर्व मत को दोहराया । तथापि, ऐसे आरोप निर्वाचनों के छह मास पूर्व विरचित होने चाहिए । उसने यह भी सुझाव दिया कि जांच आयोग द्वारा दो-ी पाए गए व्यक्ति निर्वाचनों में खड़े होने से भी निरर्हित हो जाएंगे । इसके आगे, आयोग ने निर्वाचन आचरण नियम, 1961 के प्ररुप 26 को संशोधित कर एक ही प्ररुप में शपथपत्रों के माध्यम से दी जाने वाली सभी जानकारी को सरल और कारगर बनाने का सुझाव दिया । उसने उक्त प्ररुप में कर प्रयोजन के लिए अभ्यर्थी की वार्-िक आय विवरण और उसकी वृत्ति प्रस्तुत करने के लिए एक अतिरिक्त स्तंभ बनाने की भी सिफारिश की । जानबूझकर जानकारी के छिपाव या मिथ्या जानकारी देने के खतरे से निपटने और मतदाताओं के सूचना के अधिकार का संरक्षण करने के लिए आयोग ने सिफारिश किया कि आर. पी. ए. की धारा 125क के अधीन दंड को दो व-र्ा के न्यूनतम अवधि के कारावास का उपबंध कर और जुर्माने के वैकल्पिक खंड को हटाकर और कड़ा बनाया जाना चाहिए । इसके अलावा, आर. पी. ए. की धारा 125क के अधीन दो-ासिद्धि को लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 की धारा 8(1)(i) का भाग बनाया जाए ।

दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग ने अभिशासन में नीति पर अपनी चौथी रिपोर्ट (2008) में विभिन्न आधारों पर अभ्यर्थियों को निरर्हित करने के नतीजे पर चर्चा की । इसने सिफारिश की कि गंभीर और जघन्य अपराध (अर्थात् हत्या, अपहरण, बलात्संग, डकैती, भारत के विरुद्ध युद्ध छेड़ने, संगठित अपराध और स्वापक ओ-धि अपराध) और भ्र-टाचार से संबंधित आरोपों का सामना करने वाले सभी व्यक्तियों को निरर्हित करने के लिए आर. पी. ए. की धारा 8 का संशोधन करने की आवश्यकता है, जहां आरोप निर्वाचन से छह मास पूर्व विरचित किए गए हों । इसने व-र्ा 1998 में निर्वाचन आयोग की सिफारिश के अनुसार लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 की धारा 31 के अधीन निर्वाचन अपराध के रुप में मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के प्रस्ताव का भी समर्थन किया ।

हाल ही में अपराध विधि पर संशोधन की न्यायमूर्ति जे.एस. वर्मा कमेटी रिपोर्ट ने 'जघन्य' अपराधों के प्रवर्ग उपयुक्त भारतीय दंड संहिता के अधीन अपराधों का वर्णन

करते हुए लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में अनुसूची 1 अंतःस्थापित करने का सुझाव दिया । उसने सिफारिश की कि आर.पी. अधिनियम की धारा 8(1) को प्रस्तावित अनुसूची 1 में सूचीबद्ध अपराधों के साथ-साथ अन्य अपराधों को शामिल करने के लिए संशोधित किया जाए । तत्पश्चात् यह उपबंध करता है कि ऐसा व्यक्ति जिसके कार्य या लोप की बावत सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190(1)(क),(ख) या (ग) के अधीन संज्ञान लिया या धारा 8(1) के अधीन अपराधों की प्रस्तावित विस्तृत सूची में विनिर्दिट अपराधों की बावत सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा दो-नसिद्ध किया गया है, यथास्थिति संज्ञान लेने या दो-नसिद्धि की तारीख से निरर्हित होगा । उसने आगे यह प्रस्तावित किया कि दो-नसिद्धि की दशा में निरर्हता दो-नसिद्धि पर उन्मोचन की तारीख से छह व-र्ा की अतिरिक्त अवधि तक बनी रहेगी और दो-नमुक्ति की दशा में, निरर्हता संज्ञान लेने की तारीख से दो-नमुक्ति की तारीख तक प्रवर्तित रहेगी ।

समिति ने आगे सिफारिश किया कि निर्वाचन आयोग को सभी ऐसे अभ्यर्थियों जिनके विरुद्ध आरोप लंबित है, पर प्रत्येक तीन मास में उनके आपराधिक मामलों की प्रगति रिपोर्ट देने की बाध्यता अधिरोपित करनी चाहिए । आगे उसने सिफारिश की कि आर.पी. ए. की धारा 125क के अधीन दो-नसिद्धि की दशा में, निरर्हता से स्थान रिक्त हो जाएगा । फिर भी, आयोग ने नियंत्रक और महालेखा परीक्षक (कर्तव्य, शक्तियां और सेवाशर्तें) अधिनियम, 1971 को नामांकन पत्र फाइल करते समय या उसके पश्चात् यथासंभव शीघ्र घोनित आस्तियों और दायित्वों के गहन अन्वे-ण की अनुज्ञा देते हुए संशोधित करने का सुझाव दिया । उसने यदि संसद् और विधान मंडल के निर्वाचनों में चुनाव लड़ रहे सभी लोगों की नहीं तो कम से कम प्रत्येक सफल अभ्यर्थी की सी. ए. जी. द्वारा आस्तियों और दायित्वों की संवीक्षा करने की, सिफारिश की ।

पूर्व में समितियों और आयोग के विस्तार से किए गए अनुसंधानों और स्प-ट वर्णित रिपोर्टों से हमें इस रिपोर्ट में सिफारिश करने के लिए काफी जानकारी मिली है । प्राथमिकतः, रिपोर्टें विधि में परिवर्तन की आवश्यकता के प्रमाण है, ऐसी आवश्यकता जिसे काफी पूर्व व-र्ा 1999 में महसूस की गई थी । जब राजनीति के अपराधीकरण की बढ़ती स्थिति के दर्शाने वाले आंकड़ों के संदर्भ में देखा जाए, उच्चतम न्यायालय ने इस वृद्धि पर प्रतिक्रिया की, इसे रोकने की निर्णायक कार्रवाई करने के प्रति राजनैतिक दलों का अक्खड़पन, स्वतंत्र और नि-पक्ष निर्वाचनों की लोकतांत्रिक और संवैधानिक आवश्यकता से आगे पहुंच जाने के कारण विधि का सुधार करना न केवल अनिवार्य है बल्कि तत्काल आवश्यकता बन गई है । उच्चतम न्यायालय द्वारा विधि आयोग को निर्दि-ट दो प्रश्नों से संबंधित ऐसे सुधार की रुपरेखा पर नीचे विचार किया गया है ।

V. आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर निरर्हता

अ. तर्काधार

आरंभ में, इस प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता है कि क्या निरर्हता दो-नसिद्धि के प्रक्रम पर ही किया जाना बना रहना चाहिए जैसा इस समय आर. पी. ए. की धारा 8 के अधीन है । जैसा नीचे विस्तार से बताया गया है, वर्तमान विधि तीन मुख्य समस्याओं से ग्रस्त है ; विद्यमान सांसदों और विधायकों की दो-नसिद्धि की दर बिल्कुल कम है, ऐसे व्यक्तियों को विचारण में बहुत विलंब होता है, और विधि आपराधिक पृ--ठभूमि वाले व्यक्तियों को टिकट देने में राजनैतिक दलों को पर्याप्त निवारण का उपबंध नहीं करती । इसके परिणामस्वरूप राजनीति में आपराधिक तत्वों की उपस्थिति में भारी वृद्धि हुई है, जो हमारे लोकतंत्र को बहुत स्प-ट रूप से प्रभावित करता है ।

(i) दो-नसिद्धि की निम्न दर

किसी भी प्रकार के आपराधिक कार्यवाहियों का सामना कर रहे विद्यमान सांसदों और विधायकों का अनुपात लगभग 30% है - 4807 विधायकों में से 1460 विधायक किसी प्रकार के आपराधिक आरोप का सामना कर रहे हैं । इसके प्रतिकूल, 4807 में से केवल 24 या 0.5% को ही न्यायालय में किसी समय आपराधिक आरोपों से दो-नसिद्ध किया गया ।[42]

सभी अभ्यर्थियों में से, प्रतिशतता और भी कम है और 0.3% ने घोनित किया है कि उन लोगों ने न्यायालय में दो-नसिद्धि का सामना किया है । 47,389 अभ्यर्थियों में से 155 ने दो-नसिद्धि का सामना किया यद्यपि 8041 अभ्यर्थियों के विरुद्ध आपराधिक मामले लंबित हैं ।

यदि अभ्यर्थियों द्वारा आंकड़े छिपाने पर विचार करें, तो भी यह स्प-ट है कि विचारणाधीन मामलों वाले विधायकों और ऐसे मामले जिनके विचारण की समाप्ति पर दो-नसिद्धि हुई, के बीच काफी भारी अंतराल है । इसके अतिरिक्त जहां 24 विधायकों को दो-नसिद्ध घोनित किया गया है, दो-नसिद्धियों के परिणामस्वरूप निरर्हित की संख्या बहुत कम है क्योंकि सभी दो-नसिद्धि के परिणामस्वरूप निरर्हता नहीं हुई । **लिली थामस निर्णय**[43] का अनुसरण करते हुए केवल 3 विधायकों को दो-नसिद्धि के परिणामस्वरूप

---

[42] यह संख्या ऐसी दो-नसिद्धि बताती है जिसके परिणामस्वरूप लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 के अधीन निरर्हता नहीं होती । एशोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म ; निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा घोनित लंबित मामलों और दो-नसिद्धियों की तुलना (2013)

[43] लिली थामस ब. भारत संघ, (2013) 7 एस. सी. सी. 653.

निरर्हित किया गया । विधायकों के विरुद्ध लंबित मामलों की संख्या के प्रतिकूल, दो-नसिद्ध सांसदों और विधायकों की संख्या बिल्कुल कम बनी रहती है जो यह उपदर्शित करती है कि विधि के परिवर्तन की आवश्यकता है ।

(ii) विचारण में विलंब

भारत में न्यायिक व्यवस्था में विलंब की समस्या पर विभिन्न परिप्रेक्ष्य से व्यापक रूप से अध्ययन किया गया और चर्चा की गई । जहां आपराधिक विचारण के मामले में मुख्य चिंता प्राथमिकतः विचाराधीन कैदियों के लिए है वहीं सांसद् और विधायक जैसे राजनैतिक रूप से प्रभावशाली व्यक्तियों के विचारण में विलंब एक भिन्न प्रकार की चुनौती है । ऐसे मामलों में, विलंब होने से इस बात की पूरी संभावना है कि अभियुक्त विचारण प्रक्रिया में मध्यम मार्ग निकालने, साक्ष्य को विदू-नित करने और कार्यवाही को और विलंबित करने की स्थिति में होगा । प्रभावशाली व्यक्ति, जहां पुलिस उनकी उपस्थिति नहीं करा पाती, वहीं उसके द्वारा न्यायालय कार्यवाहियों से लंबी अनुपस्थिति द्वारा भी विलंब कारित करता है ।[44]

प्रभावशाली सार्वजनिक व्यक्तियों के विचारण में विलंब के मुद्दे को पहचाना गया और **वीरेन्द्र कुमार ओहरी** बनाम **भारत संघ**[45] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय को प्रस्तुत 239वीं रिपोर्ट में विधि आयोग द्वारा विचार किया गया । उच्चतम न्यायालय ने भी *''धीमी गति और भी धीमी हो जाती है जब राजनैतिक रूप से सशक्त या उच्च और प्रभावशाली व्यक्ति अभियुक्त होते हैं ।''* यह कहकर **गनेश नारायण** बनाम **बंगरप्पा**[46] वाले मामले में इस मुद्दे पर टिप्पणी की । ऐसी युक्तियों के कारण, विलंब को देश में दो-नसिद्धि के कम दर का प्रत्यक्षतः कारण माना जाता है ।

इस बात का पर्याप्त साक्ष्य निर्वाचनों के दौरान अभ्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत शपथपत्रों के परिशीलन से एकत्र किया जा सकता है - लोक सभा 2009 के निर्वाचन से बीस शपथपत्रों के नमूने लिए गए जिसमें आपराधिक आरोप लंबित थे, तो यह पता चला कि इनमें से आधे में आरोप छह व-र्ा से अधिक समय से जबकि कुछ में दो शताब्दी से अधिक समय से लंबित थे ।[47]

---

[44] भारत का विधि आयोग, प्रभावी व्यक्तियों के विरुद्ध आपराधिक मामलों का शीघ्र अन्वे-ाण और विचारण, रिपोर्ट सं. 239 (2012) <http://lawcommissionofindia.nic.in/reports/report239.pdf > वेबसाइट पर 2 फरवरी, 2014.

[45] रिट याचिका (सिविल) सं. 2004 का 341.

[46] (1995) 4 एस. सी. सी. 41.

[47] भारत का विधि आयोग, लिंग टू केन्डिडेट ऐफीडेविट <http://eci.nic.in/eci_main1/LinktoAffidavits.aspx> वेबसाइट पर 19 फरवरी, 2014

परिणामतः, प्रतिनिधि के रूप में कार्य कर रहे दो-ासिद्ध अपराधियों के विरुद्ध आर. पी. ए. में उपबंधित सुरक्षोपाय दो-ासिद्धि की कम संख्या और काफी विलंब के कारण प्रभावी रूप से लागू नहीं होते ।

(iii) पर्याप्त निवारण की कमी

सांसदों और विधायकों की न्यूनतम दो-ासिद्धि और लंबित आपराधिक आरोपों के परिणामों की कमी के कारण राजनैतिक दल आपराधिक पृ-ठभूमि वाले व्यक्तियों को पार्टी टिकट देने से भयभीत होते नहीं दिखाई पड़ते । वस्तुतः, पूर्व उल्लेखानुसार, आंकड़ा यह इंगित करता है कि आपराधिक पृ-ठभूमि राजनीतिज्ञों के लिए नुकसान पहुंचाने के बजाए फायदा पहुंचाने वाला प्रतीत होता है । एक अनुसंधानकर्ता ने उपलब्ध शपथपत्र के आंकड़ों का विश्ले-ाण करते हुए यह नि-कर्-ा निकाला कि अपराध से आरोपी अभ्यर्थी का अपराध रहित पृ-ठभूमि वाले अभ्यर्थी की तुलना में निर्वाचन में जीतने के अवसर का अनुपात 2:1 है ।[48] इसका यह अभिप्राय है कि राजनैतिक दल उदारतः और बारंबार अपराध आरोपित अभ्यर्थी को पार्टी टिकट देते हैं - आपराधिक पृ-ठभूमि के 74% अभ्यर्थी पिछले दस व-ाों में पुनः निर्वाचन में खड़े हुए ।[49]

निर्वाचनों में आपराधिकतः दागदार अभ्यर्थियों की सफलता का स्प-टीकरण उनकी वित्तीय आस्तियों से प्रकट होता है । जिसकी चर्चा पूर्व अध्याय IV में की गई है । संक्षेप में यह दोहराएं कि अभ्यर्थी की आपराधिक प्रास्थिति और धन के उसके स्तर के बीचठोस सकारात्मक सह संबंध है ।[50] जहां औसतन विधायकों का धन 3.83 करोड़ रुपए है वहीं आपराधिक पृ-ठभूमि वाले अभ्यर्थियों के धन बढ़कर 4.30 करोड़ और गंभीर आपराधिक पृ-ठभूमि वाले अभ्यर्थियों का धन 4.38 करोड़ रुपए है ।[51] धनी अभ्यर्थी, विशे-ाकर जो अधिक आस्तिक उगाहने की क्षमता रखते है, अपने निर्वाचनों में धन लगा सकते हैं और आगे प्रश्नगत राजनैतिक दल के लिए पूंजी उगाह सकते हैं । आपराधिक पृ-ठभूमि वाले अभ्यर्थी इस रुपरेखा में बिल्कुल सही है, क्योंकि वे विभिन्न अवैध तरीके से निधियां पैदा कर सकते हैं जिसे बाद में राजनीति और निर्वाचनों में लगाया जा सकेगा । इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि निर्वाचनों की बढ़ती लागत, निर्वाचन अभ्यर्थी की अपारदर्शी प्रक्रिया और आपराधिक तत्वों की निधि उगाहने और उपलब्ध कराने की क्षमता अपराध और राजनीति के बीच व्यापक और सतत् संबंधों के मुख्य कारण हैं ।

---

[48] मिलन वै-णव (टिप्पण 7)

[49] एशोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म (टिप्पण 11)

[50] मिलन वै-णव (टिप्पण 7)

[51] एशोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म (टिप्पण 11)

इस आंकड़े से यह स्प-ट है कि ऐसा तरीका जैसी विधि इस समय लागू है, दागदार व्यक्तियों को टिकट देने के इच्छुक राजनैतिक दलों के लिए खतरा नहीं पैदा करती । इसके प्रतिकूल, वर्तमान स्थिति वस्तुतः राजनैतिक दलों को आपराधिक पृ-ठभूमि वाले व्यक्तियों को उनके वित्तीय रूप से बाहुबली होने के कारण अपनी पंक्ति में सम्मिलित करनेके लिए प्रोत्साहित करती है । अतः, राजनीति में अपराध के प्रचलन की तब तक कमी नहीं होगी जब तक विधि को इस प्रकार परिवर्तित नहीं किया जाता कि राजनैतिक दल तब हतोत्साहित महसूस करें जब वे दल में आपराधिक पृ-ठभूमि वाले व्यक्तियों का पो-ण कर रहे हों ।

(iv) लोकतंत्र पर नकारात्मक प्रभाव

आपराधिक पृ-ठभूमि वाले व्यक्तियों की बढ़ती उपस्थिति का देश के लोकतंत्र की गुणता पर कई नकारात्मक प्रभाव है । पहला,आपराधिक समाज से भारी जुड़ाव होने के कारण निर्वाचक प्रक्रिया में भारी मात्रा में अवैध धन झोंका जाता है । धन के साथ-साथ आपराधिक पृ-ठभूमि वाले अभ्यर्थी मतदाताओं को अभित्रास करने जैसे अवैध युक्ति अपनाते हैं । एक साथ यह निर्वाचक परिणामों को विकृत करता है और परिणामतः हमारे लोकतंत्र के आधार को संकट में डालता है । यह अनैतिक चक्र भी आरंभ करता है तदद्वारा व्यवहार्य अभ्यर्थियों को आपराधिक तत्वों से गहन संबंध रखने वाले लोगों से प्रतिस्पर्धा करने के लिए अधिक धन खर्च करने की अपेक्षा करता है ।

दूसरा, राजनीति में अपराधियों के प्रवेश का एक कारण राजनैतिक आश्रम के माध्यम से न्यायिक कार्यवाहियों से बचने का वशीभूत करने की वांछा है । इस प्रकार, राजनीति का अपराधीकरण का परिणाम न्याय की प्रक्रिया में बाधा डालना और विचारण में और विलंब कारित करना भी है ।

वर्तमान रूप में विधि राजनीति के अपराधीकरण के बढ़ते कैंसर को रोकने में असमर्थ है । विरलतम दो-नसिद्धि और विचारण में काफी विलंब यह सुनिश्चित करते हैं कि राजनीतिज्ञों को कुछ नहीं सामना करना पड़ता या बिल्कुल कम झेलना पड़ता है जब वे आपराधिक क्रियाकलाप करते हैं । हमारे लोकतंत्र में इस खतरे से निपटने और राजनीतिक प्रक्रिया में अपराधियों के लगातार बहाव को प्रभावी रूप से रोकने के लिए विधि को विकसित करने की आवश्यकता है । विकसित विधि को दो चुनौतियों - दो-नसिद्धि पर निरर्हता द्वारा हुए सीमित निवारण और प्रभावशाली व्यक्तियों के विचारण में विलंब जिसके परिणामस्वरूप न्याय की प्रक्रिया के विनाश के मुद्दे का सामना करने वाला होना चाहिए ।

आ. सुधार प्रस्ताव

(i) आरोप प्रक्रिया स्प-टीकरण

आपराधिक विचारण में आरोप का प्रयोजन अभियुक्त को उसके विरुद्ध लगाए गए अभियोग की संक्षिप्त जानकारी देना है । आरोप अभियुक्त को अभियोग की प्रकृति का संक्षिप्त और असंदिग्ध विधिक भा-ा में तैयार किए गए नोटिस की तामीली है जिनका विचारण में अभियुक्त को उत्तर देना है ।[52] आरोपों में रीति, समय, स्थान और व्यक्ति जिसके विरुद्ध अपराध किया गया, आदि से संबंधित सभी विस्तृत ब्यौरे होने चाहिए ।[53]

आरोप की विरचना की प्रक्रिया इस प्रकार है । मामले के अन्वे-ाण के पश्चात्, पुलिस मजिस्ट्रेट के समक्ष या तो आरोप पत्र या समाप्ति रिपोर्ट फाइल कर सकेगा । आरोपपत्र फाइल होने पर, मजिस्ट्रेट आरोप पत्र के अपराधों का संज्ञान ले सकेगा और अभियुक्त को समन करेगा । इसके पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 228 के अनुसार आरोप विरचित किए जाते हैं । आरोपों की विरचना के समय न्यायालय से यह अपेक्षा है कि वह अभियोजन द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करे और अभियुक्त पर कौन से अपराध, यदि हैं, आरोपित किया जाए, के प्रश्न पर अपने विवेक का प्रयोग करे । आरोपों की विरचना से विचारण का आरंभ द्योतित है । अनुकल्पतः, न्यायाधीश आरोप पर बहस की सुनवाई करेगा और यह नि-क-र्ा निकालेगा कि अभियुक्त के विरुद्ध कोई प्रथमदृ-ट्या मामला नहीं बनता, जिस पर अभियुक्त को उन्मोचित किया जाता है ।

(ii) आरोप पत्र फाइल करने के प्रक्रम पर निरर्हता को क्यों न प्रवर्तित बनाया जाए

आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर निरर्हता सम्मिलित करने के प्रस्ताव की परीक्षा करने के पूर्व, आपराधिक अभियोजन के दौरान अन्य बिन्दुओं पर विचार करना श्रेयस्कर है कि कहां ऐसे कदम उठाए जाएं । यह सुझाव दिया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन पुलिस द्वारा आरोप पत्र फाइल करने का प्रक्रम एक ऐसा प्रक्रम है जिसके परिणामस्वरूप अभियुक्त निरर्हित हो सकेगा ।

आरोप पत्र फाइल करते समय पुलिस सक्षम न्यायालय के समक्ष अन्वे-ाण के दौरान एकत्रित सामग्री को मात्र इस पर विचार करने के लिए अग्रेनित करता है कि अभियुक्त पर किन उपबंधों के अधीन आरोप लगाया जाए । इस प्रक्रम पर न्यायालय द्वारा अभियुक्त के दो-ा का दूर से भी या प्रथमदृ-ट्या अवधारण नहीं किया जाता । न्यायालय

---

[52] वी.सी. शुक्ला ब. राज्य द्वारा सी.बी.आई., 1980 क्रि. एल.जे. 690,732

[53] धारा 211, 212 और 213, भारतीय दंड संहिता, 1973.

को आरोप पत्र फाइल करने या अग्रेनित करने के प्रक्रम पर, ऐसी सामग्री जिसे आरोप पत्र का भाग बनाया जाता है, का सक्षम न्यायालय द्वारा परीक्षण भी नहीं किया गया है और न्यायाधीश ने स्प-टतः उक्त सामग्री पर अपने विवेक का प्रयोग नहीं किया है । न्यायालयों ने बारंबार यह अभिनिर्धारित किया है कि आरोप पत्र साक्ष्य का अधि-ठायी भाग गठित नहीं करता क्योंकि इसका परीक्षण प्रति-परीक्षा की कसौटी पर नहीं किया गया है । इस प्रक्रम पर अभियुक्त को सुनवाई का कोई अधिकार नहीं दिया जाता ।[54] समन जारी करने के पहले आरोप पत्र फाइल करने के प्रक्रम पर अभियुक्त को आरोप पत्र या किसी संबद्ध सामग्री की प्रति भी उपलबध नहीं कराई जाती । अतः, ऐसी किसी बात पर, जिस पर उसे विचार करने का कोई अवसर नहीं दिया गया या उसे कोई जानकारी नहीं है, के आधार पर किसी व्यक्ति को निरर्हित करना नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल होगा ।

इस प्रक्रम पर व्यक्ति को निरर्हित करने का यह अर्थ होगा कि व्यक्ति को उसके विरुद्ध कार्यवाही आरंभ किए बिना ही दंडित किया गया है । यह पुलिस जो अभियोजन प्राधिकारी है, का निरर्हता के प्रश्न का न्यायिक अवधारण दिए जाने के बराबर होगा । रा-ट्रीय संगो-ठी में सर्वसम्मति से यह सहमति बनी कि यह निर्वाचित पद के लिए अभ्यर्थियों की निरर्हता का अनुचित प्रक्रम है ।

यह विचार करना उचित है कि क्या न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने का प्रक्रम निरर्हता लागू करने का उचित प्रक्रम होगा । संज्ञान लेने का मात्र अभिप्राय किसी व्यक्ति द्वारा किए गए ऐसे अपराध की बावत कार्यवाही आरंभ करने की दृ-टि से अपराध की न्यायिक अवेक्षा लेना है । यह किसी के विरुद्ध कार्यवाहियां आरंभ करने से बिल्कुल भिन्न वि-ाय है, बल्कि, यह कार्यवाही आरंभ करने की पूर्वशर्त है । संज्ञान लेते समय, न्यायालय को आरोप पत्र में प्रस्तुत सामग्री पर ही विचार करना है ।[55] न्यायालय इस प्रक्रम पर साक्ष्य को परिवर्तित करने या मूल्यांकन करने और इस नि-क-र्ा पर पहुंचने के लिए स्वतंत्र नहीं है कि मामले में आगे कार्यवाही करने के लिए प्रथमदृ-ट्या कोई मामला नहीं बनता ।[56]

अभियुक्त को संज्ञान लिए जाने और समन जारी किए जाने तक न्यायालय में पहुंचने का कोई अधिकार नहीं है । संज्ञान लेने के प्रक्रम पर अभियुक्त के पास कोई

---

[54] रजनीकांत मेहता ब. उड़ीसा राज्य, 1976 क्रि. एल. जे. 1674 (ओआरआईज्ञडीबी.) ; जगदम्बा प्रसाद तिवारी ब. उत्तर प्रदेश राज्य, 1991 क्रि. एल. जे. 1883

[55] एस. के. सिन्हा, चीफ इंफोसमेंट ऑफिसर ब. विडीयोकॉन इंटरनेशनल लिमिटेड, (2008) 2 एस. सी. सी. 492 ; पश्चिमी बंगाल राज्य ब. मोहम्मद खालिद, (1995) 1 एस. सी. सी. 684.

[56] रशमी कुमार ब. महेश कुमार भाट्ट (1997) 2 एस. सी. सी. 397.

साक्ष्य पेश करने या कोई अनुरोध करने का कोई अधिकार नहीं है । यद्यपि अभियुक्त पुलिस को दो-नमोचक साक्ष्य उपलब्ध करा सकता है किंतु पुलिस ऐसे साक्ष्य को आरोप पत्र के भाग के रूप में सम्मिलित करने की किसी बाध्यता के अधीन नहीं है ।

आरोप पत्र फाइल करने या संज्ञान लेने के प्रक्रम पर अभियुक्त को सुनवाई का अवसर न देने के कारण और इस प्रक्रम पर न्यायिक विवेक के प्रयोग की कमी के कारण निर्वाचक निरर्हता लागू करने का यह उचित प्रक्रम नहीं है । आगे यदि यह माना जाए कि विचारण सेशन न्यायालय द्वारा किया जाता है तो भी मजिस्ट्रेट ही मामले का संज्ञान लेता है । इस प्रक्रम पर निरर्हता लागू करने का यह अर्थ होगा कि ऐसा मजिस्ट्रेट जिसे मामले का विचारण करने के लिए असक्षम माना जाता है, यह अवधारित करेगा कि क्या व्यक्ति को फाइल किए गए आरोपों के कारण निरर्हित किया जाए ।

इन कारणों से, हमारा यह मत है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन पुलिस रिपोर्ट का फाइल किया जाना या संज्ञान लेना निर्वाचक निरर्हता लागू करने का उचित प्रक्रम नहीं है। आरोपों की विरचना के प्रक्रम पर अब गहन विचार किया जाएगा ।

(iii) आरोपों की विरचना के मामले

क. उन्मोचन से संबंधित उपबंध

मामले के प्रकार और प्रश्नगत न्यायालय के आधार पर आरोप की विरचना और अभियुक्त के उन्मोचन से संबंधित उपबंध के तीन सेट हैं - सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण के लिए धारा 227 और 228, मजिस्टेट द्वारा विचारणीय वारंट मामले में धारा 239 और 240 जहां पुलिस रिपोर्ट फाइल की गई है किंतु साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है ; मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय मामलों में धारा 245 और 246 जहां साक्ष्य के अभिलेख के पश्चात् पुलिस रिपोर्ट नहीं फाइल की गई है । यह टिप्पण प्राथमिकतः प्रथम प्रवर्ग के बारे में है क्योंकि अधिकांश अपराध जो निरर्हता के प्रयोजन के लिए सुसंगत है, ऐसे वि-नय हैं जो धारा 227 और 228 की छूट के भीतर आते हैं ।[57]

धारा 227 उस प्रक्रम पर जब आरोप विरचित करने के लिए सुनवाई नियत है, अभियुक्त के उन्मोचन के बारे में है । यह इस प्रकार है :

> *यदि मामले के अभिलेख और उसके साथ दी गई दस्तावेजों पर विचार कर लेने पर और इस निमित्त अभियुक्त और अभियोजन के निवेदन की सुनवाई कर*

[57] इन प्रत्येक प्रवर्गों के अधीन आरोपों की विरचना और अभियुक्त के उन्मोचन की प्रक्रिया के बीच विभेद के लिए देखिए - आर. एस. नायक ब. ए. आर. अंतुल (1986) 1 एस. सी. सी. 716.

लेने के पश्चात् न्यायाधीश यह समझता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है तो वह अभियुक्त को उन्मोचित कर देगा और ऐसा करने के अपने कारणों को लेखबद्ध करेगा ।''

यह धारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अध्याय 17 का भाग है । यह भाग ''आरोप'' से संबंधित है और इस अध्याय के अधीन कई उपबंधों द्वारा साक्ष्यांकित आरोपों की संक्षिप्त विरचना की अपेक्षा करता है । आरोपों की विरचना *''कथन के समतुल्य है कि आरोपित अपराध के गठन के लिए विधि द्वारा अपेक्षित सभी विधिक शर्त विशि-ट मामले में पूरी हुई है ।''*[58] इसके अतिरिक्त, आरोप का वर्णन करने वाले शब्दों का निर्वचन ''वह विधि जिसके अधीन ऐसा अपराध दंडनीय है, द्वारा जुड़े आशय के अनुसार किया जाना चाहिए ।''[59] इसके अतिरिक्त, आरोप रीति, समय, स्थान, व्यक्ति जिसके विरुद्ध यह किया गया, आदि से संबंधित सभी विस्तृत ब्यौरे भी होने चाहिए ।[60] अतः, धाराओं का एक साथ अर्थान्वयन करने पर यह साबित होता है कि ''आरोपों की विरचना'' एक महत्वपूर्ण न्यायिक कदम है ।

आपराधिक प्रक्रिया में आरोपण प्रक्रम के प्रयोजनों और भूमिका पर उच्चतम न्यायालय निर्णयों द्वारा आरोपों की विरचना में सारगर्भित होने की अपेक्षा पर फिर बल दिया गया है । ''आरोप'' *''अभियुक्त को स्प-ट और असंदिग्ध या अभियोग की प्रकृति का संक्षिप्त नोटिस की विधि के विनिर्दि-ट भा-ा के अनुसार तैयार की गई नोटिस या सूचना''*[61] के प्रयोजन को पूरा करता है । इसके अलावा, उच्चतम न्यायालय ने यह भी मान्यता प्रदान की है कि चूंकि आरोपों की विरचना व्यक्ति की स्वतंत्रता पर गहरा प्रभाव डालता है इसलिए अभिलेख की सामग्री पर न्यायालय द्वारा उचित विचार किया जाना चाहिए ।[62]

ख. धारा 227 के अधीन जांच की प्रकृति : "अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही आरंभ करने का पर्याप्त आधार नहीं"

ए. आर. अंतुले[63] वाले मामले मामले में उच्चतम न्यायालय ने धारा 239 और धारा 227 के अधीन उन्मोचन में विभेद किया । धारा 239 के अधीन अभियुक्त को उन्मोचित

---

[58] धारा 211 (5), दंड प्रक्रिया संहिता, 1973.

[59] धारा 214 दंड प्रक्रिया संहिता, 1973.

[60] धारा 211, 212, 213, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973.

[61] वी. एस. शुक्ला ब. राज्य द्वारा सी. बी. आई. 1980 क्रि. एल. जे. 690.

[62] महारा-ट्र राज्य ब. सोमनाथ थापा, (199696) 4 एस. सी. सी. 659.

[63] आर. एस. नायस ब. ए. आर. अंतुले, (1986) 1 एस. सी. सी. 716

करने के लिए, यह साबित करना होगा कि आरोप ''निराधार है'' है । तथापि, धारा 227 के अधीन, 'आधार' की उपस्थिति मात्र पर्याप्त नहीं है ; आधार की 'पर्याप्तता' भी साबित करनी होगी । इस प्रकार आरोप में ''पर्याप्त आधार'' नहीं है तो अभियुक्त को धारा 227 के अधीन उन्मोचित किया जा सकता है । चूंकि धारा 227 के अधीन उच्च स्तर की न्यायिक संवीक्षा अपेक्षि है इसलिए यह अभियुक्त का अधिक संरक्षण प्रदान करता है ।[64]

''अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही का पर्याप्त आधार नहीं'' यह दर्शित करता है कि न्यायाधीश अभियोजन की ओर से आरोप विरचित करने का मात्र ''डाकघर''[65] या अभिलेखन मशीन''[66] नहीं है, बल्कि यह अवधारित करने के लिए कि क्या अभियोजन द्वारा विचारण के लिए मामला बनता है, मामले के तथ्यों पर अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करता है ।[67]

आरोप लगाने के प्रक्रम पर न्यायिक संवीक्षा का स्तर वैसे ही रहने की आवश्यकता नहीं है जैसा न्यायनिर्णयन के स्तर पर विचारण में प्रत्याशा है । तथापि, न्यायाधीश आरोप विरचित करते समय मात्र अभियोजन के कथन को स्वीकार नहीं कर सकता :

> *''न्यायाधीश को यह पता लगाने के लिए साक्ष्य का विश्ले-ाण करना चाहिए कि क्या अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही का पर्याप्त आधार है या नहीं । आधार की पर्याप्तता पुलिस द्वारा अभिलिखित साक्ष्य की प्रकृति या न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत दस्तावेज पर निर्भर करती है जो प्रत्यक्षतः यह प्रकट करती है कि अभियुक्त के विरुद्ध संदेहास्पद परिस्थितियां हैं जिससे कि उसके विरुद्ध आरोप विरचित किया जा सके ।''*[68]

ग. आरोप लगाने के प्रक्रम पर अभियोजन पर भार

उच्चतम न्यायालय ने **सतीश मिश्र**[69] वाले मामले को उलटते हुए **देवेन्द्र नाथ पाधी**[70] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त आरोप लगाने के प्रक्रम पर कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सकता । इस प्रकार, न्यायाधीश का विनिश्चय एकमात्र

---

[64] आर. एस. नायस ब. ए. आर. अंतुले, (1986) 1 एस. सी. सी. 716

[65] भारत संघ ब. प्रफुल्ल कुमार सामल, (1979) 3 एस. सी. सी. 4

[66] अलमोहन दास ब. पश्चिमी बंगाल, (1969) 2 एस. सी. आर. 520.

[67] के. पी. राघवन ब. एम. एच. अब्बास ए.आई.आर. 1967 एस. सी. 740 ; भारत संघ ब. प्रफुल्ल कुमार सामल (1979) 3 एस. सी. सी. 4 अलमोहन दास ब. पश्चिमी बंगाल, (1969) 2 एस. सी. आर. 520.

[68] भारत संघ ब. प्रफुल्ल कुमार सामल (1979) 3 एस. सी. सी. 4, 8 पैरा 8.

[69] उड़ीसा राज्य ब. देबेन्द्र नाथ पाधी (2005) 1 एस. सी. सी. 568.

[70] सतीश मेहरा, दिल्ली प्रशासन (1996) 9 एस. सी. सी. 766.

मामले के अभिलेख अर्थात् अभियोजन द्वारा प्रस्तुत अन्वे-ाण रिपोर्ट और दस्तावेजों पर आधारित होना चाहिए । यद्यपि आरोपों को विरचित करने का अवधारण मामले के अभिलेख पर आधारित है, फिर भी धारा 227 के अनुसार उच्चतम न्यायालय न्यायशास्त्र भी अभियोजन द्वारा कतिपय भार निर्वहन किया जाना अधिरोपित करता है :

> *''यदि साक्ष्य, जो अभियोजक अभियुक्त के दो-ा को साबित करने हेतु पेश करने का प्रस्ताव करता है, प्रति-परीक्षा में चुनौती दिए जाने या बचाव साक्ष्य यदि कोई है, द्वारा खंडित किए जाने के पूर्व चाहे पूर्णतः स्वीकार किया जाए, से* ***यह दर्शित नहीं होता कि अभियुक्त ने अपराध किया,*** *तो विचारण में कार्यवाही आरंभ करने का कोई पर्याप्त आधार नहीं होगा ।''*[71] *(बल देने के लिए रेखांकन किया गया)*

इसके अलावा, आरोप लगाने के स्तर पर अभियोजन पर प्रथमदृ-ट्या मामला साबित करने का भार भी है । प्रथमदृ-ट्या मामला तभी अस्तित्व में कहा जाता है ''यदि यह उपधारित करने का आधार है कि अभियुक्त ने अपराध किया है ।''[72] यह भी कतिपय सीमा तक अभियुक्त को संरक्षण प्रदान करता है ।

अंततः, प्रथमदृ-ट्या मामला स्थापित करने के लिए, अभिलेख पर साक्ष्य से दो-ासिद्धि की संभाव्यता से संबंधित मात्र कुछ संदेह ही नहीं बल्कि ''घोर'' संदेह पैदा करता हो ।[73]

> *''****यदि दो मत संभव हों*** *और न्यायाधीश का यह समाधान हो जाता है कि उसके समक्ष पेश साक्ष्य से अभियुक्त के विरुद्ध* ***मात्र संदेह नहीं बल्कि घोर संदेह*** *पैदा होता हो, तो वह अभियुक्त को उन्मोचित करने के पूर्णतः अपने अधिकार में होगा ।''*[74] *(बल दिया गया)*

चूंकि आरोपों की विरचना का प्रक्रम न्यायिक संवीक्षा के सारवान स्तर पर आधारित है इसलिए बिल्कुल निरर्थक आरोप इस न्यायिक संवीक्षा के समक्ष नहीं टिकेगें । अतः, भारत में अपराधीकरण की वर्तमान चिंता के संदर्भ में आरोप लगाने के प्रक्रम पर निरर्हता दुरुपयोग को रोकने के लिए सारवान विधिक सुरक्षोपायों का होना न्यायोचित है ।

---

[71] बिहार राज्य ब. रमेश सिंह, (1977) 4 एस. सी. सी. 39, 42 पैरा 4.

[72] महारा-ट्र राज्य ब. सोम नाथ थापा (1996) 4 एस. सी. सी. 659.

[73] दिलावर बालू करण ब. महारा-ट्र राज्य (2002) 2 एस. सी. सी. 135 ; सज्जन कुमार ब. केंद्रीय अन्वे-ाण ब्यूरो, (2010) 9 एस. सी. सी. 368.

[74] प्रफुल्ल कुमार सामल, (एन. 65), 9, पैरा 10.

(iv.) ऐसे व्यक्ति जिसके विरुद्ध आरोप विरचित किया जाए, को सम्मिलित करने हेतु निरर्हता की व्याप्ति को बढ़ाने का औचित्य

उपरोक्त स्प-टीकरण के अनुसार, उच्चतम न्यायालय ने यह स्प-ट किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 228 के अधीन आरोपों की विरचना के लिए यह अवधारित करने हेतु न्यायिक विवेक के प्रयोग की अपेक्षा है क्या अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाहियां आरंभ करने के पर्याप्त आधार है ।[75] आगे, इस प्रक्रम पर सबूत का भार अभियोजन पर है जो प्रथमदृ-ट्या यह साबित करे कि अभिलेख पर साक्ष्य से ''घोर संदेह'' होता है ।[76] एक साथ ऐसे परीक्षण मिथ्या आरोप अधिरोपित किए जाने के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करते हैं । आरोपों की विरचना के प्रक्रम के सुरक्षोपायों के अलावा, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 311 के आकार में एक अतिरिक्त विकल्प उपलब्ध है । धारा 311 न्यायालय को विचारण के किसी प्रक्रम पर किसी व्यक्ति को समन करने या परीक्षा करने की शक्ति प्रदान करती है यदि उसका साक्ष्य मामले के उचित विनिश्चय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है । यद्यपि इस धारा का व्यापक रुप से उपयोग नहीं किया जाता और उच्चतम न्यायालय ने इस शक्ति के मनमाने प्रयोग पर सतर्क कर दिया है ।[77] फिर भी यह न्यायालय को व्यापक विवेकाधिकार प्रदान करता है जिसका प्रयोग स्वप्रेरणा से भी किया जा सकता है । इस धारा का उपयोग आरोप की विरचना के पूर्व अतिरिक्त साक्ष्य की परीक्षा करने के लिए न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जहां ऐसी विरचना के परिणामस्वरूप अभ्यर्थी को निरर्हित किया जा सकता हो ।

अतः, आरोपों की विरचना विचारण प्रक्रिया का स्वतः चालित कदम नहीं है बल्कि ऐसा कदम है जिसकी न्यायिक संवीक्षा के प्रारंभिक स्तर पर अपेक्षा है । दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध न्यायालय द्वारा आपराधिक आरोप विरचित करने के पूर्व आरोप के गुण-दो-न पर पर्याप्त विचार करने की अपेक्षा करते हैं । आरोप विरचित होने के पूर्व अपेक्षित संवीक्षा का प्रक्रम किसी उपबंध के दुरुपयोग को रोकने के लिए पर्याप्त है जिसके परिणामस्वरूप कोई व्यक्ति निर्वाचन लड़ने से निरर्हित होता है ।

फिर भी, कतिपय अपराधों में आरोपों की विरचना के प्रक्रम को सम्मिलित कर निरर्हता की व्याप्ति को बढ़ाना अभ्यर्थी के किसी मूल या संवैधानिक अधिकार का अतिलंघन नहीं करता । आर. पी. ए. संसद् या राज्य विधान मंडल के सदस्य के रूप में लड़ने और निर्वाचित होने के अधिकार का सृजन और विनियमन करता है । हमारे लोकतंत्र के शुरु के व-र्षों से ही, उच्चतम न्यायालय द्वारा बार-बार इस पर बल दिया

---

[75] के. पी. राघवन ब. एम. एच. अब्बास ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 740.

[76] उड़ीसा राज्य ब. देबेन्द्र नाथ पाधी (2005) 1 एस. सी. सी. 568.

[77] नताशा सिंह ब. सी. बी. आई. क्रि. अपील सं. 2013 का 709 भारत का उच्चतम न्यायालय

गया है कि निर्वाचित होने का अधिकार न तो मूल अधिकार है और न ही कामन लॉ अधिकार ।[78] यह कानून द्वारा सृजित विशे-ा अधिकार है और कानून द्वारा अधिकथित शर्तों पर ही प्रयोग किया जा सकता है ।[79] अतः, यह संविधान के मूल अधिकार अध्याय के अधीन नहीं है ।[80]

(i) प्रति-तर्कों का खंडन

पिछले भाग में यह बताया गया कि आरोपों की विरचना के प्रक्रम पर लड़ रहे अभ्यर्थियों की निरर्हता सैद्धांतिकतः और व्यवहार्यतः दोनों तरह से उचित है । आजकल भारत में राजनीति के अत्यधिक अपराधीकरण के संदर्भ में, ऐसा कदम निर्वाचक लड़ाई से आपराधिक तत्वों को अपवर्जित करने की काफी क्षमता रखता है और गरिमा तथा उच्च हैसियत पुनः प्रतिि-ठित करता है जो संसद् और राज्य विधान सभाओं से संवैधानिकतः रखने की प्रत्याशा की जाती है । वहीं, ऐसे उपबंध के दुरुपयोग के संभावना का संज्ञान लेना भी अनिवार्य है । विधान मंडलों से आपराधिक तत्वों को बाहर रखने के प्रयास में, किसी को ऐसे ईमानदार अभ्यर्थियों के लिए निर्योग्यता सृजित नहीं करनी चाहिए जो स्वयं को मिथ्या आपराधिक आरोपों से थोपा हुआ पाते हैं । पहले वाले की अधिकता और बाद वाले की न्यूनता के साथ इ-टतम संतुलन बनाए रखा जाना चाहिए ।

रा-ट्रीय संगो-ठी में राजनैतिक दलों के कई प्रतिनिधियों ने यह भय व्यक्त किया कि ऐसी निरर्हता का प्रयोग राजनैतिक दुश्मनी के हथियार के रूप में किया जाएगा । कई लोगों का यह विश्वास था कि दुरुपयोग का भय इतना अधिक था कि वे स्वयं प्रस्ताव को ही खारिज कराना चाहते थे । वहीं, उच्चतम न्यायालय के सतत् विनिश्चयों ने यह अभिनिर्धारित किया कि आरोपों की विरचना न्यायालय द्वारा अभियोजक द्वारा पेश पुलिस रिपोर्ट और अन्य दस्तावेजों के आधार पर किया जाता है ; न तो अभियुक्त को साक्षियों की प्रतिपरीक्षा का अधिकार है न ही उस प्रक्रम पर कोई दस्तावेज पेश कर सकता है । इस प्रकार विवक्षा यह है कि यदि उपबंध का दुरुपयोग होता है और अभ्यर्थियों को निरर्हित करने के लिए मिथ्या आरोप विरचित किए जाते हैं तो अभियुक्त के पास कोई विधिक उपचार नहीं होगा । तीसरा, स्प-टतया यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि

---

[78] एन. पी. पुन्नुस्वामी ब. रिटर्निं ऑफिसर, नमक्काल निर्वाचन क्षेत्र, 1952 एस. सी. आर. 218 : (ए. आई.आर. 1952 एस. सी. 64) ; जगन्नाथ ब. जसवंत सिंह, ए. आई.आर. 1954 एस. सी. 210 ; डा. एन. बी. खरे ब. भारत का निर्वाचन आयोग, ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 139

[79] जमुना प्रसाद मुखरिया ब. लाच्छी राम ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 686.

[80] जगदेव सिंह सिद्धांती ब. प्रताप सिंह दौलता, ए.आई.आर. 1965 एस. सी. 183 ; श्रीमती इंदिरा नेहरु गांधी ब. श्री राज नरायण, ए. आई.आर. 1975 एस. सी. 2299 ; इब्राहीम सुलेमान सेठ ब. एम. सी. मुहम्मद, ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 354, (1980) 1 एस. सी. आर. 1148.

दो-नसिद्धि के बजाय आरोप की विरचना पर इसे आवश्यक बनाकर निरर्हता की व्याप्ति को बढ़ाना नियमनि-ठ आपराधिक न्यायशास्त्र सिद्धांतों से विपथन है । जैसा श्री टी. ए. अध्यार्जुना ने संगो-ठी में यह इंगित किया व्यक्ति तकनीकी रूप से निर्दो-न है जब तक वह दो-ी साबित नहीं हो जाता और सक्षम न्यायालय द्वारा दो-नसिद्ध नहीं किया जाता । इस प्रकार आरोप की विरचना के प्रक्रम पर उसे निरर्हित करना पर्याप्त न्यायशास्त्रीय कठिनाइयों के अनुसार असामयिक होगा ।

दुरुपयोग, अभियुक्त के लिए उपचार की कमी और आपराधिक न्यायशास्त्र की पवित्रता इन तीनों सरोकारों में से सभी में कुछ सार हैं । तथापि, किसी में भी पूर्व भाग के तर्क को विस्थापित करने का पर्याप्त तार्किक प्रभाव नहीं है । जहां दुरुपयोग निश्चित रूप से संभावित है वहीं यह संक्षेप में दो-नयुक्त विधि को सुधार करने का प्रस्ताव नहीं देता । उच्चतम न्यायालय ने प्राधिकार में निहित कानूनी शक्ति के संदर्भ में बार-बार यह इंगित किया है कि शक्ति के दुरुपयोग की संभाव्यता शक्ति प्रदान न करने या ऐसे उपबंध को अभिखंडित करने का कारण नहीं है ।[81] इसी प्रकार, दुरुपयोग का संभाव्य भय स्वतः विधि का सुधार न करने का औचित्य नहीं हो सकता है । यह कतिपय सुरक्षोपाय संस्थित करने की अपेक्षा करता है जिस सीमा शर्त के अधीन ऐसी निरर्हता लागू होगी । इस वि-नय पर नीचे विचार किया गया है ।

यद्यपि ऐसा मत है कि अभियुक्त को आरोप की विरचना के प्रक्रम पर सीमित अधिकार है यद्यपि उसे उपलब्ध विधिक विकल्प काफी पर्याप्त हैं । जैसाकि पूर्व भाग में यह बताया गया है, आरोप विरचित करने के प्रक्रम में न्यायिक विवेक का काफी उपयोग सम्मिलित है, अभियुक्त को सुनवाई का अवसर प्रदान करता है, अभियोजन पर प्रथमदृ-ट्या मामला साबित करने का सबूत का भार डालता है और उन्मोचन कर दिया जाएगा जब तक अभिवंचित आधार विचारण की कार्यवाही आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त नहीं हैं । इस प्रकार, यह ऐसा नहीं है मानों अभियुक्त के पास आरोप विरचित किए जाने तक कोई उपचार नहीं है, बल्कि इसके विपरीत, उसके पास इस प्रक्रम के पूर्व कई विधिक विकल्प हैं ।

अंततः, यद्यपि आपराधिक न्यायशास्त्र किसी व्यक्ति को अन्यथा साबित होने तक निर्दो-न होने की उपधारणा करता है, फिर भी आरोपों की विरचना के प्रक्रम पर किसी व्यक्ति को निर्वाचन लड़ने से निरर्हित करना इस प्रतिपादना से अनुचित नहीं है । ऐसे उपबंध का इससे कोई संबंध नहीं है कि क्या वस्तुतः संबद्ध व्यक्ति अभिकथित अपराध का दो-ी है या नहीं । इसके विपरीत, यह ऐसे तरह के व्यक्तियों के लिए जो भारत में

[81] इंदिरा नेहरु गांधी ब. राज नरायण, 1975 सुप्र. एस. सी. सी. 1.

प्रतिनिधायी लोक पद धारण करने के योग्य है, सुभिन्न विधिक अवधारण का परिचायक होता है । संसद् और राज्य विधान सभाओं में आपराधिक तत्वों का प्रचुरोद्भवन इस स्थिति को ठीक करने हेतु सार्वजनिक समाधान का सूचक है । आगे, विद्यमान उपबंध जो अकेले दो-नसिद्धि पर व्यक्तियों को निरर्हित करते हैं, इस कार्य को करने में असमर्थ हो गए हैं । अतः, अब दृढ़तापूर्वक यह महसूस किया गया कि निर्वाचन में खड़े होने से जिन्हें सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा जिनके विरुद्ध आपराधिक आरोप विरचित किए गए हैं कतिपय सुरक्षापायों के अधीन निरर्हित करना आवश्यक है । प्रतिनिधायी पद के लिए उपयुक्तता के ऐसा अवधारण का उसके दो-नी होने या निर्दो-न होने से कोई संबंध नहीं है जिसका निर्णय केवल आपराधिक विचारण में किया जा सकता है और किया जाएगा । दोनों को मिलाकर और उसके द्वारा यह तर्क करना कि सुझाया गया सुधार न्यायशास्त्रीय रीति से दो-नपूर्ण है, वैचारिक रूप से भूल होगा।

इस प्रकार अब सुरक्षोपाय से संबंधित प्रश्न पर विचार करना है जो इस उपबंध के दुरुपयोग को रोकने के लिए आवश्यक है जिसके कारण मिथ्या आरोप विरचित किए जा सकेंगे । चूंकि ऐसे सुरक्षोपाय का प्रयोजन यह सुनिश्चित करना है कि मिथ्या आरोप विरचित किए जाने की संभावना कम से कम हो, त्रिभागीय दृ-टिकोण अपनाया गया है । पहला, ऐसी तरह के अपराध जिसके संबंध में आरोप विरचित किया गया है, केवल उन अपराधों को सम्मिलित करने तक सीमित है जो गंभीर और जघन्य अपराध हैं । इसका दो औचित्य है - छोटे अपराध जिनका गढ़ा जाना आसान है, में आरोपों के नैमित्तिक फाइल किए जाने का निवारण करना ;इस बात पर बल देना कि ऐसी निरर्हता सीमित परिस्थितिं में लागू होती है जब प्रश्नगत अपराध ऐसी प्रकृति के हैं जिसका उनके द्वारा किए जाने का आरोप लगाया गया है, जो निर्वाचित लोक प्रतिनिधि के लिए बिल्कुल अनुपयुक्त है । दूसरा, निर्वाचन के पहले समय-सीमा नियत की जानी चाहिए जिस अवधि के दौरान विरचित आरोप इस निरर्हता को लागू नहीं होंगे । ऐसी संरक्षित शर्त लगाने का तर्काधार राजनैतिक प्रतिद्वंद्वी को एकमात्र निरर्हित कराने के आशय से निर्वाचनों के ठीक समीप मिथ्या आरोप विरचित कराने के प्रभाव से दूर रखना है । तीसरा, निरर्हता विनिर्दि-ट समय-सीमा तक ही रहेगी । इस प्रकृति की निरर्हता पर समुचित शर्त इस बात पर बल देगा कि आरोप-आधारित निरर्हता का प्रभाव उपयुक्त है । वहीं यह किसी प्रोत्साहन को रोकेगा कि व्यक्ति मिथ्या आरोप फाइल न करे । इन सभी बातों पर चर्चा विधि के अधीन निर्मित सुरक्षोपायों वाले भाग में नीचे की गई है ।

इ. सुरक्षोपाय

(i) ऐसे अपराध जिसके संबंध में यह निरर्हता लागू होती है

कुछ पूर्व रिपोर्टों में अपराधों के क्षेत्र की बावत कई सिफारिशें की गई हैं । उदाहरणार्थ, 2004 के निर्वाचन आयोग प्रस्ताव में यह सिफारिश की गई है कि पांच व-र्ा या अधिक की अधिकतम अवधि के कारावास से दंडनीय किसी अपराध का आरोपी व्यक्ति पर निरर्हता लागू होनी चाहिए । ए. आर.सी. ने ''नीति और शासन'' पर अपनी रिपोर्ट में और विधि और न्याय मंत्रालय ने ''निर्वाचक विधि पर पृ-ठभूमि पत्र, 2010'' में भी पांच व-र्ा दंड से सहमति जतायी है ।

उपरोक्त सिफारिशों के सर्वे के आधार पर यह स्प-ट है कि ऐसे अपराध जिसे यह निरर्हता लागू होती है, को सीमित करने के दो स्प-ट कारण हैं अर्थात् वे अपराध जो ऐसी प्रकृति के है कि यदि वे उन पर लगाए जाएं तो संसद् या राज्य विधानमंडलों में लोगों के प्रतिनिधियों के लिए अनुपयुक्त समझे जाते हैं, सम्मिलित किए जाते हैं और सूची अधिकतम संभव सीमा तक दुरुपयोग को रोकने के लिए बिल्कुल सीमित की जाए । प्रश्नगत के आधार पर इन अपराधों का अवधारण भिन्न-भिन्न है - यद्यपि उनका मूल आधार एक जैसा है ।

यदि इन दो सिद्धांतों पर विचार किया जाए, तो हमें विश्वास है कि ऐसे सभी अपराध जिनके लिए पांच व-र्ा या अधिक का अधिकतम दंड उपबंधित है इस उपबंध की छूट के भीतर सम्मिलित किए जाने चाहिए । इस प्रस्ताव के समर्थन के तीन औचित्य है : पहला, गंभीर रूप में व्यापकतः मान्य सभी अपराध इस उपबंध के अधीन आते हैं । इसमें हत्या, बलात्संग, व्यपहरण, डकैती, भ्र-टाचार निवारण अधिनियम के अधीन भ्र-टाचार और ऐसी प्रकृति के अन्य अपराध जो लोक पद धारण करने से निरर्हित करने से उन्हें आरोपित करना उचित ठहराते हैं, अपराध सम्मिलित है । दूसरा उपर्युक्त उद्धृत आंकड़े से यह प्रदर्शित होता है कि अधिकांश अपराध जिनका सांसद् विधायक और निर्वाचन लड़ने वाले अभ्यर्थी आपराधिक अभियोजन झेलते हैं ऐसे उपबंधों से संबंधित हैं । इस प्रकार विकसित उपबंध यह सुनिश्चित करेगा कि ऐसे अभ्यर्थी निरर्हित किए जाएं जिससे व्यवस्था पर ठीक प्रभाव पड़े । तीसरा, पांच व-र्ा अवधि का मानक विहित करने से स्वाभाविकता नजर आएगी, उपबंध समरुप है और विनिर्दि-ट अपराधों पर समाश्रित नहीं है जिससे मनमानेपन का खतरा हो । अतः समरुप पांच व-र्ा अवधि गंभीर और गैर-गंभीर अपराधों के बीच युक्तियुक्त वर्गीकरण करता है और संसद् और राज्य

विधान मंडल में आपराधिक तत्वों का प्रवेश निवारित करने के अपने उद्देश्य से तार्किक संबंध रखता है ।

(ii) नियत अवधि

ऐसी आशंका व्यक्त की गई कि ऐसी निरर्हता लागू करने से ऐसे मिथ्या मामलों की बाढ़ आ जाएगी जिसमें किसी अभ्यर्थी को निरर्हित करने के एकमात्र आशय से निर्वाचन के ठीक पूर्व आरोप विरचित किए जाएंगे । किसी निर्वाचन के लिए नामांकन की संवीक्षा की तारीख से पूर्व ऐसी अवधि के दौरान फाइल किए गए आरोपों को निरर्हता नियत अवधि तक लागू नहीं होगी । इस विभेद का आधार स्प-ट है - जो राजनैतिक अभ्यर्थियों के विरुद्ध फाइल किए जाने वाले मिथ्या मामलों के निवारण के लिए है । उद्भूत प्रश्न इस नियत अवधि के काल के बारे में है ।

एन. सी. आर. डब्ल्यू. सी. ने यह सिफारिश की थी कि निरर्हता आरोपों की विरचना की तारीख से एक व-र् की समाप्ति पर आरंभ होनी चाहिए । 2004 को निर्वाचन आयोग प्रस्ताव और 2008 का दूसरा प्रशासनिक पुनर्विलोकन आयोग रिपोर्ट (शासन की नीति) ने उन मामलों में निरर्हता की मांग की जो निर्वाचन के पहले छह मास पूर्व फाइल किए गए थे ।

आगे संगो-ठी में ऐसी सहमति उभरती नजर आयी कि नियत अवधि नामांकन की संवीक्षा की तारीख से एक व-र् होनी चाहिए अर्थात् एक व-र् की अवधि के दौरान फाइल आरोपों से निरर्हता नहीं होगी । हम महसूस करते हैं कि एक व-र् समुचित समय सीमा है । यह ऐसी काफी लंबी अवधि है कि मिथ्या आरोप, जो विनिर्दि-ट अभ्यर्थी को निरर्हित करने के लिए फाइल किए जाएं से ऐसी निरर्हता नहीं होगी ; वहीं यह इतनी अधिक भी नहीं है जो ऐसी निरर्हता को निरर्थक बनाती हो । इस प्रकार यह लड़ रहे प्रत्येक अभ्यर्थी को उन्मोचित होने के लिए न्यूनतम एक व-र् की अवधि की अनुज्ञा देती है । अतः, यह निरर्हता की व्याप्ति को बढ़ाने और वहीं एकमात्र निरर्हता गढ़ने की दृ-टि से मिथ्या मामले फाइल करने को हतोत्साहित करने के बीच समुचित संतुलन बनाता है ।

(iii) उपयोज्यता की अवधि

धारा 8(i) में निरर्हता की वर्तमान स्कीम उस काल के लिए समयावधि विहित करती है जिसके दौरान निरर्हता लागू होती है । धारा 8(i) के अधीन दो-ासिद्धि के लिए, व्यक्ति दो-ासिद्धि से छह व-र् तक निरर्हित है यदि वह केवल जुर्माने से या उन्मोचन की तारीख से आरंभ होकर छह व-र् के अलावा कारावास से दंडित है । धारा 8(2) और

8(3) के अधीन दो-नसिद्धि के लिए वह मात्र अपने कारावास की अवधि के लिए और उन्मोचन की तारीख आरंभ होकर छह व-र् के लिए निरर्हित होता है । दो-नसिद्धि पर निरर्हता हेतु विनिर्दि-ट समयावधि होने पर यह असंगत होगा यदि आरोपों की विरचना पर निरर्हता का ऐसा करने का लोप किया जाता है और अनिश्चित काल के लिए लागू किया जाता है । अतः, यह आवश्यक है कि एक समयावधि विनिर्दि-ट की जाए ।

समयावधि की बावत कई सुझाव दिए गए हैं जिस दौरान निरर्हता प्रभावी बनी रहे । जे. एस. वर्मा कमेटी और एन. सी. आर. डब्ल्यू. सी. के अनुसार निरर्हता दो-नमुक्ति तक बनी रहनी चाहिए । तथापि, विधि आयोग की 170वीं रिपोर्ट में यह सुझाव दिया कि निरर्हता की उपयोज्यता आरोप की विरचना या दो-नमुक्ति, जो भी पूर्वतर हो, की तारीख से पांच व-र् तक होनी चाहिए ।

इस बावत प्रस्तुत कई मतों पर दृढ़तापूर्वक विचार करने के पश्चात् हम न्यायमूर्ति बी. पी. जीवन रेड्डी के अध्यक्षता में 170वें विधि आयोग की रिपोर्ट के प्रस्ताव में थोड़ा उपांतरण करना चाहते हैं । इस रिपोर्ट में निरर्हता की विनिर्दि-ट अवधि आरोप की विरचना या दो-नमुक्ति, जो पूर्वतर हो, की तारीख से पांच व-र् सुझाया गया था । हम इस प्रस्ताव को बहुत सारगर्भित मानते हैं । तथापि, यह उल्लेखनीय है कि रिपोर्ट में निर्वाचन के पहले विरचित आरोप जिसके दौरान निरर्हता नहीं होगी, नियत अवधि की सिफारिश नहीं की । इस प्रकार, पांच व-र् की अवधि के पीछे तर्काधार यह था कि आरोपी व्यक्ति को कम से कम एक निर्वाचन लड़ने से निरर्हित किया जाए ।

तथापि, इससे बात नहीं बनेगी यदि एक व-र् की नियत अवधि सृजित की जाती है । यह इस कारण है कि यदि किसी व्यक्ति को निर्वाचन के छह मास पहले उसके विरुद्ध आरोपित किया जाता है तो वह इस निर्वाचन से निरर्हित नहीं होगा क्योंकि यह नियत शर्त के भीतर है । वहीं, यदि यह माना जाए कि अगला निर्वाचन छह व-र् बाद है (जो आम धारणा है) तो वह दूसरे निर्वाचन से भी निरर्हित नहीं होगा क्योंकि आरोप की विरचना की तारीख से छह व-र् की अवधि तक व्यपगत हो जाएगा । अतः, इस नियत अवधि के प्रभाव को ध्यान में रखते हुए, यह सिफारिश किया जाता है कि निरर्हता की अवधि आरोप की विरचना या दो-नमुक्ति, जो पूर्वतर हो, की तारीख से छह व-र् तक बढ़ाई जाए ।

इस सिफारिश का तर्काधार स्प-ट है : यदि किसी व्यक्ति को दो-नमुक्त किया जाता है तो यह कहना निरर्थक है कि निरर्हता उसी तारीख से उठा ली जाती है । यदि उसे दो-नमुक्त नहीं किया जाता है और विचारण जारी रहता है तो छह व-र् की अवधि दो कारणों से उचित है - पहला, यह सुनिश्चित करना काफी पर्याप्त है कि निरर्हता की

वर्धित व्याप्ति का पर्याप्त निवारक प्रभाव है । छह व-र्ा की अवधि कम से कम यह सुनिश्चित करेगी कि व्यक्ति एक निर्वाचन चक्र से निरर्हित हो जाएगा तद्द्वारा यह अपराधियों के राजनीति में प्रवेश करने के विरुद्ध वास्तविक सुरक्षोपाय होगा । वहीं एक जैसी अवधि विहित की गई है जब कतिपय अपराधों के लिए दो-नसिद्धि पर किसी व्यक्ति को निरर्हित किया जाता है जो ऐसे उपबंध की तुलना करे । इस प्रकार, यह समरुपता का अतिरिक्त गुण है । इन कारणों से, यह सिफारिश की जाती है कि किसी व्यक्ति के विरुद्ध परिगणित अपराधों की बावत विरचित किए गए आरोप की दशा में, वह आरोप की विरचना या दो-नमुक्ति, जो पूर्वतर हो, की तारीख से छह व-र्ा की अवधि तक निर्वाचनों में खड़ा होने से निरर्हित हो जाएगा, बशर्ते कि आरोप निर्वाचन के पूर्व संरक्षित काल के भीतर विरचित न किया गया हो ।

ई. वर्तमान सांसदों/विधायकों के विरुद्ध विरचित आरोप

उपरोक्त प्रस्ताव तदद्वारा आर. पी. ए. के अधीन कतिपय समय पर विरचित आरोपों को निरर्हता का आधार बनाता है । इस प्रकार केवल यदि किसी व्यक्ति के विरुद्ध ऐसे अपराधों के संबंध में जिसका अधिकतम दंड पांच व-र्ा या अधिक है, निर्वाचन से एक व-र्ा से अधिक और छह व-र्ा से कम समय से पूर्व आरोप विरचित किए गए हों तो उक्त व्यक्ति निरर्हित हो जाएगा । इस समयावधि के प्रतिनिर्देश के बिना मात्र आरोप की विरचना उसे निरर्हित करने के लिए पर्याप्त नहीं है । इस प्रस्ताव का तर्काधार स्प-ट है - यदि कोई संरक्षित समय (नियत अवधि) में आरोपित है तो विधि निर्वाचन के पूर्व दुरुपयोग की संभावना का संज्ञान लेते हुए उन्हें संरक्षित करती है ; यदि किसी व्यक्ति के विरुद्ध छह व-र्ा से अधिक समय से आरोप लंबित है तो विधि यह अवधारण करती है कि इस आधार पर निरर्हता की अवधि ऐसी निरर्हता की अवधि नहीं बढ़ाएगा जो दो-नसिद्धि द्वारा पैदा हुई है । इस प्रकार, कोई व्यक्ति उस समय जब उसके विरुद्ध आरोप विरचित किए गए, के आधार पर निरर्हित होता है ।

तथापि, इसका यह अर्थ है कि कतिपय दशाओं में वर्तमान सांसदों/विधायकों पर उनके द्वारा पद धारण करते समय उनके विरुद्ध आरोप विरचित किए जा सकते हैं । यह तब हो सकता है जब निर्वाचन के पूर्व संरक्षित समय (नियत अवधि) के दौरान उनके विरुद्ध आरोप विरचित किया जाता है और वह निर्वाचन जीतता है और जब आरोप निर्वाचन के लिए नामांकन की संवीक्षा की तारीख से पूर्व छह व-र्ा से अधिक से उसके विरुद्ध आरोप विरचित किया गया है तो आरोप व्यपगत हो गया समझा जाएगा । इसके अलावा, आरोप ऐसे सांसद्/विधायक के विरुद्ध आरोप विरचित किया जा सकता है जब

वह पदासीन है । सार यह है कि इन तीन स्थितियों में विधि में समरुप विचार किया गया है ।

प्रथम दो स्थिति में, पूर्वोक्त स्प-टतः रेखायित कारणों से, विधि अभ्यर्थी को निर्वाचन लड़ने की अनुज्ञा देती है । इस प्रकार यह स्प-ट है कि इन स्थितियों में, ऐसा व्यक्ति जिसके विरुद्ध आरोप विरचित किया गया है किंतु फिर भी लड़ने की अनुज्ञा दी जाती है, मात्र इस कारण निरर्हित किया जा सकता है कि वह निर्वाचन जीत गया है । वह संरक्षण प्रदान करेगा फिर भी विधि उसके लिए भ्रामक है । एकरुपता के लिए यह आवश्यक है कि जब पदासीन सांसद/विधायक के विरुद्ध आरोप विरचित किया जाता है तो उन्हें ठीक उसी क्षण जब आरोप विरचित किए जाते हैं, निरर्हित नहीं किया जाना चाहिए । तथापि, वहीं संसद् को आपराधिक तत्वों से मुक्त रखने के विचार के असंगत है यदि ऐसे व्यक्तियों को किसी अनुवर्ती अनुशास्तियों के बिना उनके पदधारी पदों पर कार्य करते रहने की अनुज्ञा दी जाती है । विशे-नतः यह उपरोक्त आंकड़ों के आलोक में सही है जो राजनैतिक अभ्यर्थियों और पदधारकों वाले विचारणों में बहुत विलंब होना प्रदर्शित होता है । इस प्रकार, ऐसे विद्यमान सांसदों/विधायकों के लिए, जो उनके विरुद्ध विरचित आरोपों सहित पद पर है, यह सुनिश्चित करने के लिए कतिपय उपबंध आवश्यक है जिससे कि लोक पद की प्रति-ठा बनाई रखी जा सके।

1. **विचारणों का शीघ्र निपटान** – यह सिफारिश की जाती है कि ऐसे आसीन सांसद/विधायक की दशा में जिनके विरुद्ध (उपरोक्त तीन स्थितियों में) सुसंगत आरोप विरचित किए गए हैं विचारण का शीघ्र निपटान किया जाए । तथापि, विशे-नकर शक्तिशाली व्यक्तियों वाले विचारणों में विलंब का आंकड़ा यह प्रदर्शित करता है कि वस्तुतः ऐसा होना काफी संभाव्य है । इस प्रकार, हम सुझाते हैं कि उच्चतम न्यायालय यह आदेश पारित करे कि ऐसे सभी मामलों में जब आसीन सांसद्/विधायक के विरुद्ध आरोप विरचित किया जाता है तो सुसंगत न्यायालय जहां उसका विचारण किया जा रहा है, एक व-र्ा की विचारण को पूरा करने की समय-सीमा के भीतर दैनन्दिन आधार पर विचारण करे । उपरोक्त पहले दो मामलों में, यह समयावधि उस तारीख से आरंभ होगी जिसको व्यक्ति सदस्य के रूप में शपथ ग्रहण करता है ; तीसरे मामले में यह उस तारीख जिसको उसके विरुद्ध आरोप विरचित किए जाते हैं, से चालू होगी । यह यथासंभव विचारण को शीघ्रता प्रदान करेगा और तदद्वारा यह सुनिश्चित करेगा कि या तो उसे दो-नसिद्ध किया जाए और निरर्हित किया जाए या युक्तियुक्त अवधि के भीतर दो-नमुक्त किया जाए ।

2. यदि विचारण उक्त समयावधि के भीतर पूरा नहीं किया जाता है या आरोप उक्त अवधि में अभिखंडित नहीं किया जाता है तो विचारण न्यायालय उस सुसंगत उच्च न्यायालय को जिसकी अधिकारिता के भीतर वह है लेखबद्ध कारण बताएगा कि क्यों विचारण पूरा नहीं किया जा सका । अपने कारण बताते समय, वह **आर. एस. नायक** बनाम **ए. आर. अंतुल**[82] वाले मामले में अधिकथित उच्चतम न्यायालय के मार्गदर्शक सिद्धांतों का पालन कर सकता है । उक्त अवधि समाप्त हो जाने पर, दो परिणाम हो सकते हैं :

क. व्यक्ति उक्त समयावधि की समाप्ति पर स्वतः निरर्हित हो जाएगा, या

ख. मत देने का अधिकार, पद की पारिश्रमिक और परिलब्धियां सदन की समाप्ति पर उक्त अवधि के अंत तक निलंबित हो जाएगी ।

हमारी राय में, ये दोनों विकल्प राजनैतिक दलों को आपराधिक आरोप वाले अभ्यर्थियों को खड़ा करने से पर्याप्त रुप से हतोत्साहित करेंगे । जहां पहले वाले के पास समरुप बर्ताव करने का फायदा है कि कैसे लड़ रहे अभ्यर्थी जिनके विरुद्ध आरोप विरचित किए गए हैं और परिणामतः निरर्हित हो चुके हैं, पर विचार करे, वहीं बाद वाला सदन से व्यक्ति की सदस्यता का महत्वपूर्ण हैसियत छीनता है । ये दोनों विकल्प पहले मामले में निरर्हता और दूसरे में निर्योग्यता को कठोर बनाता है, सदन के विघटन तक लागू रहेंगे । उच्चतम न्यायालय पूर्वोक्त विकल्पों में से एक विकल्प, जो वह अपने विवेक से अधिक उचित समझे, के कार्यान्वयन का निदेश दे ।

इस भाग की समाप्ति पर, यह दोहराया जा सकता है कि हम सिफारिश करते हैं कि विनिर्दि-ट अपराधों के संबंध में जब वे विशि-ट समय पर विरचित हों आरोपों की विरचना पर निरर्हता होनी चाहिए । इस संतुलित उपबंध की सिफारिश राजनीति से आपराधिक तत्वों को दूर रखने की आवश्यकता है वहीं दूसरी ओर ऐसे अति-समावेशी उपबंध का सृजन न कर जो ईमानदार अभ्यर्थियों को उनके विरुद्ध मिथ्या मामले लगाकर निरर्हित होने से निरर्हित करता है, के बीच इ-टतम सामंजस्य के रूप में की गई है । यह गंभीर अपराधों से आरोपित अधिकांश अपराधियों को राजनीति की दौड़ से बाहर रखेगा । वहीं ऐसे शे-ा लोगों के लिए जो विधि के सुरक्षोपायों के फायदाग्राही हैं, आसीन सांसदों और विधायकों से निपटने के लिए कठोर उपबंध का भी उपबंध किया गया है । यह आशा है कि उपबंधों का ऐसा संयोजन दागदार अभ्यर्थियों को टिकट देने से राजनैतिक दलों को निवारित करेगा । ऐसे अभ्यर्थी या तो निर्वाचनों में भाग लेने में

[82] (1992) 1 एस. सी. सी. 279.

समर्थ नहीं होंगे या, यदि भाग लेंगे भी, तो अंतिम उपाय के रूप में अपनी सदस्यता या निरर्हता के मुख्य फायदों से वंचित होने के साथ-साथ अपने मामलों के शीघ्र विचारण के अधीन होंगे । अतः, हमें विश्वास है कि इस सुधार में भारतीय निर्वाचन और राजनीति से आपराधिक तत्वों को ठीक से स्वच्छ करने की क्षमता है ।

उ. पूर्व व्यापी उपयोजन

धारा V-क में की गई चर्चा के अनुसार विधायकों के विचारण में बहुत विलंब होता है । आसीन सांसदों और विधायकों के कुछ आपराधिक विचारण दो दशकों से अधिक समय से लंबित हैं ।[83] जहां सामान्यतः आरोपों की विरचना पर निरर्हता का उपरोक्त सुधार प्रस्ताव केवल भवि-यलक्षी प्रभाव से लागू होगा, हम विश्वास करते हैं राजनीति के अपराधीकरण की वर्तमान स्थिति और लंबित विचारणों में विलंब की मात्रा के कारण सुधार प्रस्ताव तभी प्रभावी होगा यदि इसे भूतलक्षी प्रभाव से लागू किया जाए । अर्थात्, इन संशोधनों के प्रभावी होने की तारीख को उस तारीख को लंबित आपराधिक आरोपों (पांच व-र्ा से अधिक द्वारा दंडनीय) वाले सभी व्यक्ति कतिपय सुरक्षोपायों के अधीन निरर्हित होने के दायी हैं ।

तथापि, निरर्हता प्रभावी होने के पूर्व निम्नलिखित स्थितियों पर विचार किया जाना चाहिए :

(i) आरोप विधि प्रवृत्त होने के समय निर्वाचनों से पूर्व नामांकनों की संवीक्षा की तारीख से एक व-र्ा से कम अवधि के भीतर विरचित किए गए हों - इस मामले में नियत अवधि भाग V-ग (ii) के वर्णनानुसार लागू होगी और व्यक्ति निरर्हित नहीं होगा ।

(ii) आरोप विधि प्रवृत्त होने के समय नामांकनों की संवीक्षा की तारीख से छह व-र्ा अधिक पूर्व विरचित किए गए हों - इस मामले में, हम विश्वास करते हैं कि व्यक्ति को निरर्हित किया जाए, चूंकि निरर्हता की निर्योग्यता संशोधन प्रवृत्त होने के पूर्व उसके विरुद्ध लागू नहीं है। चूंकि व्यक्ति अपने विरुद्ध विरचित किए गए आरोपों के परिणामस्वरूप किसी निर्योग्यता से ग्रस्त नहीं है इसलिए यह उचित है कि वह अधिनियम के प्रवृत्त होने के पश्चात् ही निरर्हित होगा ।

(iii) आरोप लंबित है, व्यक्ति इस विधि के अधिनियम की तारीख को आसीन सांसद या विधायक है - ऐसे मामलों में, हम विश्वास करते हैं कि आसीन सांसदों

[83] निर्वाचन आयोग बेवसाट से निकाला गया अभ्यर्थी का शपथपत्र ।

और विधायकों के दो हजार से अधिक विचारणों को शीघ्रता से निपटाने का प्रशासनिक भार काफी अधिक होगा । अतः, विधि किसी व्यक्ति के विरुद्ध तभी लागू होना चाहिए जब वह इस उपबंध के अधिनियम के पश्चात् पहली बार निर्वाचन लड़े किंतु ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध नहीं जो अधिनियम की तारीख को पद धारण कर रहा है ।

जब तक विधि इस रीति से भूतलक्षी प्रभाव से लागू नहीं होती, इसका देश की राजनीति के अपराधीकरण पर कोई महत्वपूर्ण निवारक प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

VI. मित्या शपथपत्र फाइल करने का परिणाम

अ. तर्काधार

किसी रा-ट्रीय या राज्य विधान सभा निर्वाचन के अभ्यर्थी से निर्वाचन संचालन नियम, 1961 से उपाबद्ध प्ररुप 26 के आकार में शपथपत्र प्रस्तुत करने की अपेक्षा है जिसमें उनकी आस्ति, दायित्व और उनके विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही, यदि कोई है, से संबंधित कतिपय जानकारी होनी चाहिए । विशे-ाकर, निर्वाचन संचालन नियम 4क के साथ प्ररुप 26 के अधीन निम्नलिखित जानकारी अपेक्षित है :

(i) यदि अभ्यर्थी दो या अधिक व-र्ा से दंडनीय किसी अपराध का अभियुक्त है और न्यायालय द्वारा आरोप विरचित किए गए हैं तो एफ. आई. आर. सं., मामला सं. और आरोपों की विरचना की तारीख जैसी जानकारी ;

(ii) आर. पी. ए. की धारा 8 में सम्मिलित न किए गए किसी मामले में दो-ासिद्धि का ब्यौरा जहां दंडादेश एक व-र्ा या अधिक था ;

(iii) अभ्यर्थी, पति/पत्नी और आश्रितों की पैन संख्या और आयकर विवरणी की प्रास्थिति;

(iv) अभ्यर्थी पति/पत्नी और सभी आश्रितों की जंगम और स्थावर आस्तियों के ब्यौरे;

(v) लोक वित्त संस्थाओं या सरकार के प्रति अभ्यर्थी के दायित्व का ब्यौरा ; और

(vi) वृत्ति या आजीविका और शैक्षिक अर्हता का ब्यौरा ।

(i) प्रकटन की अपेक्षा का विधायी इतिहास

निर्वाचन सुधार पर विधि आयोग के 170वें रिपोर्ट, 1999 में पहली बार यह सुझाव दिया गया कि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (आर. पी. ए.) में यह अधिदेश करते हुए नई धारा 4क जोड़ी जानी चाहिए कि व्यक्ति तब तक निर्वाचन में खड़े होने के अपात्र होगा जब तक वह अपने, अपने पति/पत्नी और आश्रित नातेदारों के पास रखी आस्तियों को घो-ात करने वाला शपथपत्र नहीं करता । इस घो-ाणा की भी अपेक्षा थी

कि क्या दंड न्यायालय द्वारा कतिपय विनिर्दि-ट अपराधों में से किसी के संबंध में उसके विरुद्ध आरोप विरचित किए गए हैं ।[84]

2002 में, एशोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफार्म ने अन्य के साथ उपरोक्त सिफारिश को क्रियान्वित करने के लिए न्यायालय में आवेदन किया ।[85] उच्चतम न्यायालय ने निर्वाचन आयोग को निदेश दिया कि वह सभी अभ्यर्थियों के नामांकन पत्र के साथ फाइल किए जाने वाले शपथपत्र पर आस्तियों और दायित्वों, लंबित और दो-नसिद्ध आपराधिक मामला और शैक्षिक अर्हताओं के ब्यौरों की अपेक्षा करे ।

इस निर्णय के अनुसरण में, निर्वाचन आयोग ने इस आशय का निदेश जारी किया कि उपरोक्त ब्यौरे वाला शपथपत्र फाइल करने की असफलता के परिणामस्वरूप नामांकन पत्र को भारतीय दंड संहिता के अधीन दांडिक परिणाम होने के अलावा आर. पी. ए. की धारा 33(1) के अर्थान्तर्गत अपूर्ण समझा जाएगा । रिटर्निंग आफिसर नामांकन पत्रों की संवीक्षा के समय संक्षेप में जांच करेगा और सारवान प्रकृति की खामी है अस्वीकृत करने का आधार माना जाएगा ।[86]

बाद में उसी व-र्, आर. पी. ए. को धारा 33क और 33ख जोड़कर संशोधित किया गया । धारा 33क में यह उल्लेख है कि दो व-र् से अधिक के कारावास द्वारा दंडनीय अपराध से अभ्यर्थी के विरुद्ध न्यायालय द्वारा विरचित किन्हीं आरोपों और किसी दो-नसिद्धि जो उसे निरर्हित नहीं किया किंतु एक या अधिक व-र् के कारावास के बारे में नामांकन पत्र के साथ जानकारी फाइल की जाएगी । धारा 33ख में यह उल्लेख है कि किसी निर्णय, डिक्री या निर्वाचन आयोग के आदेश के होते हुए भी, कोई भी अभ्यर्थी आर. पी. ए. और उसके अधीन बनाए गए नियमों के अधिदेश के अलावा कोई जानकारी प्रकट करने का दायी नहीं होगा । अतः, आस्तियों और शैक्षिक अर्हताओं के अतिरिक्त प्रकटन के बारे में उच्चतम न्यायालय के निदेश इस संशोधन द्वारा उलट दिया गया ।

धारा 33ख को **पी. यू. सी. एल.** बनाम **भारत संघ**[87] वाले मामले में चुनौती दी । उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि धारा 33ख एशोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफार्म वाले मामले में निर्णय के अनुसरण में निर्वाचन आयोग द्वारा जारी

---

[84] भारत का विधि आयोग, 'निर्वाचक विधियों के सुधार पर एक सौ सत्तरहवीं रिपोर्ट ।

[85] भारत संघ ब. एसोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफॉर्म, (2002) 5 एस. सी. सी. 294.

[86] भारत का निर्वाचन आयोग, आदेश तारीख 28 जून, 2002, सं. 3/ईआर/2002/जेएस-II/वॉल्म.-III प्राप्त 29 जनवरी, 2014.

[87] (2003) 4 एस. सी. सी. 399.

निदेश अकृत हो गया । धारा 33ख के रोक का स्प-ट आशय इस न्यायालय के निर्णय के अनुसरण में निर्वाचन आयोग द्वारा जारी निदेशों को सारतः अकृत करना है ।

न्यायाधीशों ने इस मामले में तीन अलग-अलग राय दी । निर्णय का प्रभाव धारा 33ख को असंवैधानिक ठहराना था क्योंकि इसके द्वारा समय की मांग के बावजूद जानकारी के प्रचार पर पूरी रोक लगाई गई । विधानमंडल न्यायालय के निदेशों से विपथित हो सकते हैं लेकिन उनकी अवज्ञा नहीं कर सकते जैसाकि उसने धारा 33 ख को लागू कर ऐसा किया है । आगे, एशोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफार्म ने मत देने के कार्य को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के रूप में मूल अधिकार को मान्यता प्रदान की और प्रवृत्त किया और धारा 33ख इसे छीन नहीं सकती है ।

(ii) अभ्यर्थी की जानकारी के प्रकटन पर लागू विधि

घटनाओं के इस क्रम के परिणामस्वरूप, अभ्यर्थियों से अब निम्नलिखित जानकारी देने की अपेक्षा है :

आर. पी. ए. की धारा 33क के साथ पठित निर्वाचन संचालन नियम, 1961 के नियम 4क के अधीन निम्नलिखित पर जानकारी देते हुए निर्वाचन संचालन नियम के संलग्न प्ररुप 26 में शपथपत्र की अपेक्षा है :

(i) ऐसे मामले जिसमें अभ्यर्थी को दो या अधिक व-र्ा के कारावास से दंडनीय किसी अपराध को दो-ी ठहराया गया है और लंबित मामले जिसमें न्यायालय द्वारा आरोप विरचित किए गए हैं ।

(ii) लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 में वर्णित किन्हीं अपराधों से भिन्न किसी अपराध के लिए दो-ासिद्धि और एक या अधिक व-र्ा के कारावास से दंडित होने के मामले ।

पी. यू. सी. एल. वाले मामले के निर्णय के अनुसरण में भी, अभ्यर्थी को ऐसे सभी लंबित मामलों से संबंधित जानकारी प्रस्तुत करनी है जिसमें न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया है, उसकी आस्तियां और दायित्व और शैक्षिक अर्हताएं ।[88] व-र्ा 2012 में प्ररुप 26 के आकार का दोनो तरह की जानकारी को सम्मिलित करने के लिए पुनरीक्षित किया गया ।[89]

---

[88] भारत का निर्वाचन आयोग - प्रस्तावित निर्वाचक सुधार (2004)

[89] भारत का निर्वाच आयोग, निर्देश दिनांक 24 अगस्त, 2012, प्राप्त 27 जनवरी, 2014.

(iii) मिथ्या प्रकटन का वर्तमान विधिक परिणाम

जहां **पी. यू. सी. एल.** निर्णय ने जानकारी प्रस्तुत करने की बावत अभ्यर्थी की बाध्यताएं स्प-ट किया वहीं परिणामों के बारे में यह कम स्प-ट था यदि दी गई जानकारी मिथ्या है । यह अभिनिर्धारित किया कि रिटर्निंग आफिसर इस आधार पर नामांकन पत्र अस्वीकृत नहीं कर सकता कि अभ्यर्थी की जानकारी मिथ्या थी । रिटर्निंग आफिसर द्वारा आस्तियों का सत्यापन संक्षेप जांच द्वारा उचित नहीं था क्योंकि उसने अभ्यर्थी को सुनवाई का उचित अवसर नहीं दिया ।

इस नि-क-र्ा के परिणामस्वरूप, निर्वाचन आयोग ने नामांकन पत्रों की खारिजी पर अपने पूर्व निदेश को अप्रवर्तनीय होने का आदेश दिया । इसके बजाए यह निदेश दिया कि यदि दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा समर्थित मिथ्या जानकारी प्रस्तुत करने से संबंधित शिकायत की जाती है तो रिटर्निंग आफिसर आर. पी. ए. की धारा 125क के अधीन अभ्यर्थी को अभियोजित करने की कार्रवाई आरंभ करनी चाहिए जो मिथ्या शपथ फाइल करने के लिए शास्ति का उपबंध करती है ।[90] ऐसा अभ्यर्थी जो अपेक्षित जानकारी देने में असफल रहता है, मिथ्या जानकारी देता है या कोई जानकारी छिपाता है, तो वह छह मास के कारावास या जुर्माना या दोनों से दंडित किया जा सकेगा ।

मिथ्या जानकारी फाइल करने के लिए अभियोजित अभ्यर्थियों का संख्या का आंकड़ा उपलब्ध नहीं है, यद्यपि इस अपराध पर दो-नसिद्धि की कोई रिपोर्ट दिखाई नहीं पड़ती ।

तथापि, आर. पी. ए. की धारा 125क को आर. पी. ए. की धारा 8 के अधीन अपराधों की सूची में सम्मिलित नहीं किया गया है । इसका यह अर्थ है कि धारा 125क के अधीन दो-नसिद्धि कारावास के दौरान और अतिरिक्त छह व-र्ा की अवधि के लिए अभ्यर्थी को निरर्हित नहीं करता ।

अतः, मिथ्या जानकारी का फाइल किया जाना चाहे धारा 125क के अधीन साबित हो तो भी यह निर्वाचन को अपास्त करने या आगे निरर्हता के लिए आधार नहीं है । इस वि-नय को अभ्यर्थी के शपथपत्र में आस्तियों से संबंधित मिथ्या घो-णा वाली निर्वाचन अर्जी में **अरुण दत्तात्रेय सावंत** बनाम **किशन शंकर राठौर**[91] वाले मामले में 2007 बाम्बे उच्च न्यायालय के विनिश्चय में उठाया गया था । निर्वाचन न्यायाधीश ने यह कहा कि

---

[90] निर्वाचन आयोग पत्र सं. 3/ईआर/2004-जेएस-II, तारीख 2.6.2004.

[91] ईएल. पेट. 10/2004, (बाम्ब. एच.सी.) (16 अगस्त, 2007) (अप्रकाशित) देखिए कुलदीप पेदनेकर ब. अजीत गोगाटे, 2006 (4) बाम्ब. क्रि. 392.

रिटर्निंग आफिसर पी. यू. सी. एल. के अनुसार इस आधार पर नामांकन पत्र खारिज नहीं कर सकता कि शपथपत्र में जानकारी मिथ्या थी । इसके बावजूद चूंकि अभ्यर्थी का नामांकन पत्र त्रुटियों से ग्रस्त थी यह धारा 100(1)(घ) (i) के अधीन नामांकन पत्र की अनुचित स्वीकृति के मामले के समान है और इस आधार पर निर्वाचन को अपास्त कर दिया । आगे, यह भी स्प-ट था कि निर्वाचन तत्वतः मिथ्या नामांकन से प्रभावित था चूंकि अनुचित स्वीकृति निर्वाचित अभ्यर्थी का कागज था ।

न्यायाधीश ने आगे यह कहा कि ''शपथपत्र की महत्ता को अभ्यर्थियों द्वारा अपूर्ण जानकारी देकर या तात्विक जानकारी छिपाकर उपहास करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती जिसके परिणामस्वरूप मतदाताओं को गलत जानकारी मिलती है या जानकारी से वंचित होना पड़ता है ।''[92] उन्होंने सिफारिश की कि संसद् ऐसे अभ्यर्थी को निरर्हित करने का उपबंध करते हुए एक उपबंध के अधिनियम पर विचार करे जिसका निर्वाचन न्यायालय के इस नि-कर्-ा पर अविधिमान्य हो जाता है कि उसने मिथ्या और अपूर्ण शपथपत्र फाइल की थी जिसकी कमी सारवान प्रकृति की थी ।

इस वि-नय को **नंदराम बागरी** बनाम **जय किशन** वाले दिल्ली उच्च न्यायालय के विनिश्चय में भी उठाया गया था । यहां, न्यायालय ने कहा कि धारा 125क के अधीन दो-नसिद्धि निर्वाचन अपास्त करने का आधार था, क्योंकि निर्वाचन तब 'दू-नित' हो जाएगा ।[93] तथापि, इसे इतरोक्ति के रूप में लिया जा सकता है, चूंकि मामले का मुख्य नि-कर्-ा यह था कि प्रत्यर्थी अपने शपथपत्र के दुर्व्यपदेशन का दो-ी नहीं था ।

इसी प्रकार का दृ-टिकोण अन्य उच्च न्यायालयों द्वारा भी दर्शाया गया । **कृ-णमूर्ति** बनाम **शिव कुमार**[94] वाले मामले में न्यायालय ने पंचायत निर्वाचन के मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि पूर्ण जानकारी प्रकट करने की असफलता असम्यक असर के समान होगी और वहीं गलत या मिथ्या जानकारी मतदाता के निर्वाचक अधिकार के स्वतंत्र उपयोग में हस्तक्षेप करती है ।

इसके अतिरिक्त, 2013 में उच्चतम न्यायालय द्वारा विनिश्चित **रिसर्जेन्स इंडिया** बनाम **भारत निर्वाचन आयोग**[95] वाले मामले में, निर्वाचन आयोग द्वारा इस तथ्य के कारण समस्या झेलनी पड़ी कि नामांकन पत्र अपूर्ण शपथपत्र के लिए खारिज नहीं

---

[92] पर खानवेलकर जे. (तत्कालीन) पैरा 138, अरुण दात्तात्रेय सावंत ब. किशन शंकर राठोर, ईआई पेट.10/2004, (बम्बे उच्च न्यायालय) (16 अगस्त, 2007) (अप्रकाशित)

[93] (2013)200 डी.एल.टी. 402.

[94] (2009) 3 सी.टी.सी. 446.

[95] डब्ल्यू.पी. सं. 2008 का 121, (एस.सी.) (13 सितंबर, 2013) (अप्रकाशित)

किया जा सकता, पर विचार किया गया । न्यायालय ने कहा कि यदि शपथपत्र रिक्त विशि-टियों के साथ फाइल किया जाता है तो यह शपथपत्र फाइल करनेकी संपूर्ण प्रक्रिया को निरर्थक कर देता है और अनुच्छेद 19(1)(क) के अधीन नागरिकों के मूल अधिकारों का अतिलंघन करता है । अतः, रिटर्निंग आफिसर अभ्यर्थी को रिक्त भरने के लिए अनुस्मरण कराए और यदि अनुस्मारक की उपेक्षा की जाती है तो नामांकन पत्र खारिज किए जाने योग्य है ।

न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि पी. यू. सी. एल. निर्णय ऐसी बात पर रोक लगाती है और यह स्प-ट किया कि पी. यू. सी. एल. ने मात्र यह इंगित किया है कि अभ्यर्थी ने संवीक्षा के समय उत्तर देने की असमर्थता व्यक्त की, किंतु रिटर्निंग आफिसर को नामांकन पत्र खारिज करने से रोक लगाने का आशय नहीं था । तथापि, यह लगता है कि केरल उच्च न्यायालय सहित कतिपय उच्च न्यायालयों ने मिथ्या शपथपत्र फाइल करने की निरर्हता के प्रश्न पर प्रतिकूल मत व्यक्त किया । उन लोगों ने अपनी स्थिति इस आधार पर स्प-ट की कि मिथ्या शपथपत्र फाइल करने को कानून में धारा 8 के अधीन निरर्हता के लिए आधार के रूप में नामांकन खारिज के आधार या आर. पी. ए. की धारा 100 के अधीन निर्वाचन अपास्त करने के आधार के रूप में व्यक्त नहीं किया गया है ।[96] केरल उच्च न्यायालय द्वारा आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि निर्वाचन आयोग के आदेश के अननुपालन को अधिनियम की धारा 100 की उपधारा 1(घ)(iv) के अधीन निर्वाचन को अपास्त करने के लिए संविधान के उपबंधों का अननुपालन नहीं माना जा सकता है ।

अतः, उपरोक्त विनिश्चयों से यह नि-कर्-ा निकाला जा सकता है कि यदि नामांकन पत्रों में ब्यौरों का लोप किया गया है तो यह खारिज किए जाने योग्य है । यदि जानकारी को मिथ्या माना जाए तो धारा 125क के अधीन अभियोजन संभव है, फिर भी दो-ासिद्धि पर परिणाम अस्प-ट है । जहां बम्बई उच्च न्यायालय ने **अरुण दत्तात्रेय सावंत** वाले मामले में दृढ़तापूर्वक यह कहा कि मिथ्या शपथपत्र का फाइल किया जाना निर्वाचन को अपास्त करने का आधार है, वहीं अन्य उच्च न्यायालयों ने प्रतिकूल मत व्यक्त किया । इसलिए, मिथ्या शपथपत्र का फाइल किए जाने से निर्वाचन अधिमत या भावी निर्वाचन लड़ने की अभ्यर्थी की योग्यता को परिवर्तित किए बिना अधिकतम छह मास के करावास और जुर्माने का भागी हो सकेगा ।

---

[96] मणि सी. कप्पन ब. के. एम. मणि, 2007 (1) के.एल.टी. 228 ;नारायण गुनाजी सावंत ब. दीपक वसंत केसरकर, 2011 (3) बाम्ब. क्रि. 754

यह अभ्यर्थी के प्रकटन के आधारभूत मूल्य को बहुत दुर्बल बनाता है क्योंकि परिणामों की कमी के कारण अभ्यर्थियों के पास सही जानकारी उपलब्ध कराने का कोई प्रोत्साहन नहीं है । प्रत्युत यह **एशोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म** के निर्णय की मान्यता के अनुसार अभ्यर्थी के पूर्ववृत्त को जानने के अनुच्छेद 19(1)(क) के अधीन नागरिक के मूल अधिकार को प्रभावित करता है ।

आ. सुधार प्रस्ताव

यह निर्वाचन आयोग द्वारा उल्लेख किया गया है कि अभ्यर्थी बारंबार जानकारी देने में असफल रहते हैं या अपनी आस्तियों की मात्रा जैसी जानकारी को बहुत कम आंक कर बताते हैं ।[97]

सुधार सुझाव तीन प्रकार का है, पहला, यह कि धारा 125क के अधीन मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के लिए दंड न्यूनतम बढ़ाकर दो व-र्ा किया जाए और जुर्माने के आनुकल्पिक खंड को हटाया जाए । दूसरा, धारा 125क के अधीन दो-ासिद्धि को आर. पी. ए. की धारा 8(1) के अधीन निरर्हता का आधार बताया जाए ।[98] ये शास्तियां छोटी-छोटी त्रुटियों या विसंगतियों या बिना विचारे लोपों को लागू नहीं होनी चाहिए । तीसरा, मिथ्या शपथपत्रों के फाइल किए जाने को आर. पी. ए. की धारा 123 के अधीन भ्र-ट आचरण बनाया जाना चाहिए ।

इसके अतिरिक्त, ई. सी. आई. ने सुझाव दिया है कि शपथपत्र में मिथ्या कथन से संबंधित कोई शिकायत निर्वाचन की घो-णा की तारीख से 30 दिन की अवधि के भीतर संबद्ध रिटर्निंग आफिसर को की जाए । तब रिटर्निंग आफिसर धारा 125क के अधीन आक्षेपित अभ्यर्थी को अभियोजित करने की कार्रवाई आरंभ करेगा । यह भी स्थापित किया गया है कि रिटर्निंग आफिसर इस बावत अभियोजन आरंभ करने का एकमात्र मार्ग नहीं है । अनुकल्पतः, आम जनता का कोई सदस्य शिकायत सीधे मजिस्ट्रेट के न्यायालय को कर सकता है ।[99]

इस प्रकार, मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के लिए धारा 8 के अधीन निरर्हता धारा 125क के अधीन दो-ासिद्धि के बाद होती है । पूर्व चर्चा के अनुसार प्रभावशाली व्यक्तियों के विरुद्ध विचारण, विशे-ाकर ऐसे विचारण जहां विचारण के परिणामस्वरूप निरर्हता हो सकती है, में काफी विलंब होता है । अतः, उच्चतम न्यायालय यह आदेश दे

---

[97] भारत का निर्वाचन आयोग - प्रस्तावित निर्वाचक सुधार (2004)

[98] वही

[99] भारत का निर्विचन आयोग, 'निर्वाचन आयोग द्वारा प्रस्तासवित महत्वपूर्ण निर्वाचन सुधार' प्राप्त 3 फरवरी, 2014.

कि आर. पी. ए. की धारा 125क के अधीन विचारण किए जाने वाले सभी मामलों का विचारण सुसंगत न्यायालय द्वारा दैनिक आधार पर किया जाए ।

नामांकन पत्रों की संवीक्षा की प्रक्रिया मिथ्या शपथपत्र बहुतायत में फाइल करने को रोकने के लिए मजबूत की जाए । इस प्रयोजन के लिए आक्षेप फाइल करने के लिए जो रिटर्निंग आफिसर आर. पी. ए. की धारा 36 के अधीन ठीक समझे, पर्याप्त समय देने के लिए रिटर्निंग आफिसर को नामांकन पत्र फाइल करने की अंतिम तारीख और संवीक्षा की तारीख के बीच एक सप्ताह का अंतराल लागू किया जाना चाहिए ।

(i) सुधार प्रस्ताव : एक मूल्यांकन

मिथ्या प्रकटन करने के लिए किसी गंभीर परिणाम की कमी निश्चित ही उच्चतम न्यायालय और निर्वाचन आयोग के निदेशों का इस वि-नय पर व्यापक उल्लंघन करने में उत्तरदायी है । ऐसा दुर्व्यपदेशन अपने मत का स्वतंत्र प्रयोग की मतदाताओं की क्षमता को प्रभावित करता है । अतः, निम्नलिखित की तत्काल आवश्यकता है :

(i) धारा 125क के अधीन दंड बढ़ाकर न्यूनतम दो व-र्ा का कारावास लागू करना ;

(ii) धारा 125क के अधीन दो-नसिद्धि को आर. पी. ए. की धारा 8(1) के अधीन निरर्हता का आधार लागू करना ;

(iii) शीघ्र रीति से मिथ्या प्रकटनों की घटना को रोकने के लिए जीतने वालों के शपथपत्रों के सत्यापन का स्वतंत्र तरीका निर्मित करना ;

(iv) आर. पी. ए. की धारा 123 के अधीन भ्र-ट आचरण के रूप में मिथ्या शपथपत्र फाइल करने का अपराध सम्मिलित करना ।

ये सुझाव काफी सतर्कता से युक्त हैं । धारा 125क के अधीन न्यूनतम दो व-र्ा का दंड बढ़ाकर इसे धारा 8(3) की परिधि में सम्मिलित किया जाएगा जिसके अधीन कम से कम दो व-र्ा के दंडनीय अपराध से दो-नसिद्धि पर निरर्हता होती है । किसी संभव कमी, जैसे यदि कोई न्यायाधीश कम दंडादेश विहित करता है को आगे दूर करने के लिए, निर्वाचन आयोग का सुझाव है कि धारा 125क को भी धारा 8(1) के सूचीबद्ध अपराधों में लाया जाए जिसके परिणामस्वरूप दंड की मात्रा पर ध्यान दिए बिना निरर्हता होती है ।

धारा 123क के अधीन भ्र-ट आचरण जब किसी अभ्यर्थी या उसके निर्वाचन अभिकर्ता द्वारा किया जाता है, धारा 100(1)(ख) के अधीन निर्वाचन को अपास्त करने के आधार है । धारा 123 के अधीन मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के अपराध के सम्मिलन का परिणाम यह होगा कि ऐसे मतदाता या अभ्यर्थी जो किसी विशि-ट निर्वाचन को चुनौती देना चाहते हैं, के लिए निर्वाचन अर्जी फाइल करने का विकल्प खुलेगा ।

निर्वाचन आयोग के इस सुझाव का वर्तमान विधि में पर्याप्त आधार है । धारा 8(1) में पहले से ही अन्य कई निर्वाचक अपराधों के लिए निरर्हता की शास्ति हैं । धारा 8(1)(i) वर्गो के बीच दुश्मनी फैलाने, मतदान पत्र हटाने, बूथ हड़पने और किसी नामांकन पत्र को कपटपूर्वक बिगाड़ने या न-ट करने के लिए दो-ासिद्धि पर निरर्हित करती है । यद्यपि इन अपराधों में से कुछ के लिए दंड की मात्रा कम है जो छह व-र्ा से लेकर एक व-र्ा तक है फिर भी अपराध का निर्वाचनों के संचालन से सीधे जुड़े होने के कारण उससे निरर्हता होती है । नामांकन पत्रों में मिथ्या प्रकटन ऐसे अपराधों की स्कीम के भीतर आता है, अतः, इसे धारा 8(1)(i) के अधीन सम्मिलित किया जाना चाहिए ।

VII. सिफारिशें और प्रस्तावित धाराएं

अ. नि-क-र्ा और सिफारिशें

उपरोक्त विचार-विमर्श के आलोक में, विधि आयोग **पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन और अन्य** बनाम **भारत संघ और एक अन्य** (2011 की रिट याचिका संख्या 536) वाले मामले में 16 दिसंबर, 2013 के उसके आदेश में माननीय उच्चतम न्यायालय के निदेशों के अनुसार इस रिपोर्ट में विचारित दो मुद्दों पर निम्नलिखित सिफारिशें करता है :

I. क्या निरर्हता दो-नसिद्धि पर जैसा वर्तमान में है या न्यायालय द्वारा आरोपों की विरचना पर या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन अन्वे-ण अधिकारी द्वारा रिपोर्ट के प्रस्तुतीकरण पर होनी चाहिए । [परामर्श पत्र का मुद्दा सं. 3.1(ii)]

1. विचारण में काफी विलंब और विरलतम दो-नसिद्धि के कारण, दो-नसिद्धि पर निरर्हता राजनीति के बढ़ते अपराधीकरण को रोकने में असमर्थ साबित हुई है । ऐसी विधि विकसित करने की आवश्यकता है जो प्रभावी निवारण करे और न्याय की प्रक्रिया के विनाश को रोके ।

2. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन पुलिस रिपोर्ट का फाइल किया जाना न्यायिक विवेक के पर्याप्त प्रयोग की कमी के कारण निर्वाचक निरर्हता लागू करने का उचित प्रक्रम नहीं है ।

3. आरोपों की विरचना का प्रक्रम न्यायिक संवीक्षा के पर्याप्त स्तर पर आधारित है और आरोप के प्रक्रम पर निरर्हता में राजनीति के अपराधीकरण को फैलाने को रोकने की काफी क्षमता है यदि दुरुपयोग रोकने के लिए साथ में सारवान अनु-ांगी विधिक सुरक्षोपाय हो ।

4. दुरुपयोग की संभावना, अभियुक्त के पास उपचार की कमी और आपराधिक न्यायशास्त्र की पवित्रता के कारण आरोपों की विरचना के लिए निरर्हता हेतु निम्नलिखित सुरक्षोपाय लागू किया जाना आवश्यक है :

(i) केवल ऐसे अपराध जिसके लिए अधिकतम दंड पांच व-र्ा या अधिक है, इस उपबंध की छूट के भीतर सम्मिलित किया जाना चाहिए ।

(ii) निर्वाचन के नामांकन की संवीक्षा की तारीख से एक व-र्ा पूर्व फाइल किए गए आरोपों पर निरर्हता नहीं होगी ।

(iii) निरर्हता विचारण न्यायालय द्वारा दो-नमुक्ति तक या छह व-र्ा की अवधि तक जो पूर्वतर हो, तक प्रवर्तित रहेगी ।

(iv) आसीन सांसदों/विधायकों के विरुद्ध आरोपों के लिए विचारण शीघ्रता से किए जाएं और वे दैनन्दिन आधार पर संचालित किए जाएं और एक व-र्ा की अवधि के भीतर समाप्त किए जाएं । यदि विचारण एक व-र्ा की अवधि के भीतर समाप्त नहीं किए जाते हैं तो निम्नलिखित परिणाम होंगे :

- सांसद्/विधायक एक व-र्ा की अवधि की समाप्ति पर निरर्हित हो जाएंगे ; या

- सांसद्/विधायक का सदन में सदस्य के रूप में मत देने का अधिकार, पारिश्रमिक और उनके पद से जुड़ी अन्य परिलब्धियां एक व-र्ा अवधि की समाप्ति पर निलंबित हो जाएंगी ।

5. उपरोक्त रीति से निरर्हता भूतलक्षी प्रभाव से भी लागू होनी चाहिए । विधि प्रवृत्त होने की तारीख से लंबित आरोपों (5 व-र्ा या अधिक से दंडनीय) वाले व्यक्ति भावी निर्वाचनों को लड़ने से निरर्हित हो जाएंगे जब तक ऐसे आरोप निर्वाचन के लिए नामांकन पत्र की संवीक्षा की तारीख से एक व-र्ा से कम अवधि पूर्व विरचित किए गए हैं या व्यक्ति अधिनियम के समय आसीन सांसद्/विधायक है । ऐसी निरर्हता इस पर ध्यान दिए बिना कि आरोप कब विरचित किए गए, लागू होनी चाहिए ।

II. क्या लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 125क के अधीन मिथ्या शपथपत्र फाइल किए जाने को निरर्हता का आधार होना चाहिए और यदि हां, शपथपत्र की सत्यता के न्यायनिर्णयन के लिए कैसी सीमा और तंत्र विकसित करने की आवश्यकता है ? [परामर्श पत्र का मुद्दा सं. 305]

1. पर्याप्त विधिक परिणामों की कमी के कारण अभ्यर्थी के शपथपत्रों की विधियों का व्यापक अतिक्रमण है । परिणामतः, आर. पी. ए. में निम्नलिखित परिवर्तन किए जाने चाहिए :

(i) मिथ्या शपथपत्र फाइल करने के अपराध पर आर. पी. ए. की धारा 125क के अधीन बढ़ाकर न्यूनतम दो व-र्ा का दंड लागू करना ।

(ii) आर. पी. ए. की धारा 8(1) के अधीन निरर्हता के आधार के रूप में धारा 125क के अधीन दो-नसिद्धि का सम्मिलित करना ;

(iii) आर. पी. ए. की धारा 123 के अधीन भ्र-ट आचरण के रूप में मिथ्या शपथपत्र फाइल करने का अपराध सम्मिलित करना ।

2. चूंकि धारा 8 के अधीन निरर्हता लगाने के लिए धारा 125क के अधीन दो-नसिद्धि आवश्यक है, अतः उच्चतम न्यायाल आदेश दे कि धारा 125क के अधीन सभी विचारणों का दैनन्दिन आधार पर संचालित करने का सुसंगत न्यायालय को निदेश दे ।

3. नामांकन पत्र पर आक्षेप फाइल करने हेतु पर्याप्त समय देने के लिए, नामांकन पत्र फाइल करने की अंतिम तारीख और संवीक्षा की तारीख के बीच एक सप्ताह का अंतराल दिया जाना चाहिए ।

आ. प्रस्तावित धाराएं

1. पूर्वोक्त सिफारिशों के क्रियान्वयन के लिए, निम्नलिखित विधायी सुधारों का सुझाव दिया गया है :

(i) आरोपों की विरचना पर निरर्हता का संशोधन

विधि आयोग यह प्रस्ताव करता है कि धारा 8क के पश्चात् आर. पी. ए. में नई धारा (धारा 8ख) अंतःस्थापित की जाए । यह इस प्रकार होनी चाहिए :

"8ख. कतिपय आरोपों के लिए आरोप की विरचना पर निरर्हता - (i) ऐसा व्यक्ति जिसके विरुद्ध आरोप कम से कम पांच व-र्ा के कारावास से दंडनीय अपराध के लिए सक्षम न्यायालय द्वारा विरचित किया गया है, आरोप की विरचना से छह व-र्ा की अवधि या आरोप के अभिखंडन या दो-नमुक्ति की तारीख, जो पूर्वतर हो, तक निरर्हित होगा ।

2. इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, उपधारा (1) की कोई बात ऐसे व्यक्ति को लागू नहीं होगी :

(i) जो इस उपबंध के अधिनियमन की तारीख को संसद्, राज्य विधानसभा या विधान परि-द् के सदस्य का पद धारण करता है, या

(ii) जिसके विरुद्ध कम से कम पांच व-र् के कारावास से दंडनीय अपराध का आरोप विरचित किया गया है ;

(क) उस निर्वाचन के संबंध में, धारा 36 के अधीन निर्वाचन के लिए नामांकन की संवीक्षा की तारीख से एक व-र् से अन्यून पूर्व ;

(ख) उस समय जब ऐसा व्यक्ति संसद्, राज्य विधान सभा या विधान परि-द् के सदस्य का पद धारण करता है और ऐसे पद के लिए इन उपबंधों की अधिनियमिति के पश्चात् निर्वाचित किया गया है ।

3. उपधारा (2) के खंड (ii) के अंतर्गत आने वाले संसद्, राज्य विधान सभा या विधान परि-द् के सदस्यों के लिए, वे आरोप की विरचना की तारीख या निर्वाचन की तारीख, जो पूर्वतर हो, से एक व-र् की समाप्ति पर निरर्हित होंगे जब तक वे उक्त अवधि में दो-ामुक्त नहीं हो जाते या उनके विरुद्ध सुसंगत आरोप अभिखंडित नहीं हो जाता ।

या

3. उपधारा (2) खंड (ii) के अंतर्गत आने वाले संसद्, राज्य विधान सभा या विधान परि-द् के सदस्यों के लिए, सदस्य के रूप में सदन में उनका मत देने का अधिकार, पारिश्रमिक और उनके पद से जुड़े अन्य परिलब्धियां, आरोप की विरचना की तारीख या निर्वाचन की तारीख, जो पूर्वतर हो, से एक व-र् की समाप्ति पर निलंबित हो जाएगा, जब तक उक्त अवधि में दो-ामुक्त नहीं हो जाते या उनके विरुद्ध सुसंगत आरोप अभिखंडित नहीं हो जाता ।

4. उपधारा (3) के अधनी कोई निरर्हता/निलंबन सदन के विघटन तक या राज्य सभा या राज्य विधान परि-द् के सदस्यों के लिए सदस्य के रूप में उनकी वर्तमान अवधि की समाप्ति तक लागू होगा ।

[खंड 3 को उच्चतम न्यायालय द्वारा सभी न्यायालयों को जारी निदेश के साथ पढ़ा जाए कि संसद्, राज्य विधान सभा या विधान परि-द् के सदस्यों के विचारण, जिनके विरुद्ध कम से कम पांच व-र् के कारावास द्वारा दंडनीय अपराध के लिए विचारण का आरोप विरचित किए गए हैं, में शीघ्रता की जाए और आरोप की विरचना की तारीख या निर्वाचन की तारीख जो पूर्वतर हो, से, एक व-र् में विचारण पूरा करने की दृ-टि से दैनन्दिन आधार पर सुनवाई की जाए ।]

8ग. संक्रमणकालीन उपबंध

ऐसा व्यक्ति जिसके विरुद्ध इस बात को ध्यान दिए बिना कि कब आरोप विरचित किया गया था इस उपबंध की अधिनियमिति के पूर्व कम से कम पांच व-र्ा से दंडनीय अपराध के लिए सक्षम न्यायालय द्वारा आरोप विरचित किए गए हैं, जब धारा 8ख की उपधारा (2) के अधीन छूट न प्राप्त हो, इस उपबंध की अधिनियमिति की तारीख से छह व-र्ा की अवधि तक या आरोप के अभिखंडन की तारीख या दो-नमुक्ति, जो पूर्वतर हो, तक निरर्हित होगा ।''

(ii) मिथ्या प्रकटन पर संशोधन

विधि आयोग सिफारिश करता है कि शपथपत्रों में मिथ्या प्रकटन पर विधि में निम्नलिखित परिवर्तन किए जाएं ;

(i) लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 125क का ''दो व-र्ा से अन्यून नहीं होगा, और जुर्माने का भी दायी होगा'' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं । संशोधित धारा 125क इस प्रकार पढ़ा जाए :

''125क. मिथ्या शपथपत्र, आदि फाइल करने की शास्ति - ऐसा कोई अभ्यर्थी जो निर्वाचन में चुने जाने के आशय से स्वयं या अपने प्रस्तावक के माध्यम से धारा 133 की उपधारा (1) के अधीन दिए गए अपने नामांकन पत्र में या अपने शपथपत्र में जो, यथास्थिति, धारा 33क की उपधारा (2) के अधीन दिए जाने की अपेक्षा है,-

(i) धारा 33क की उपधारा (1) से संबंधित जानकारी प्रस्तुत करने में असफल रहता है ; या

(ii) मिथ्या जानकारी देता है जिसे वह जानता है या मिथ्या होने पर विश्वास करने का कारण है ; या

(iii) कोई जानकारी छिपाता है,

तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, ऐसी अवधि के कारावास से दंडनीय होगा जो दो व-र्ा से अन्यून का नहीं होगा और जुर्माने का भी दायी होगा ।''

(ii) लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8(1) (i) को "धारा 125 (निर्वाचन के संबंध में वर्गों के बीच दुश्मनी फैलाने के अपराध)" शब्दों के पश्चात् "या धारा 125क (मिथ्या शपथपत्र, आदि फाइल करने की शास्ति)" शब्द अंतःस्थापित कर संशोधित किया जाए । संशोधित धारा 8(1) (i) को इस प्रकार पढ़ा जाए :

"8. कतिपय अपराधों की दो-नसिद्धि पर निरर्हता - (1) निम्नलिखित के अधीन दंडनीय अपराध का सिद्धदो-न कोई व्यक्ति -

(क) .....

*

*

*

(i) इस अधिनियम की धारा 125 (निर्वाचन के संबंध में वर्गों के बीच दुश्मनी फैलाने का अपराध) या धारा 125क (मिथ्या शपथपत्र, आदि फाइल करने की शास्ति) या धारा 135 (मतदान केंद्र से मतपत्र के हटाने का अपराध) या धारा 135क (मतदान बूथ हथियाने का अपराध) या धारा 136 की उपधारा का खंड (क) (किसी नामांकन पत्र को कपटपूर्वक बिगाड़ने या कपटपूर्वक न-ट करने का अपराध) ।

*

*

*"

(iii) लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 123 के खंड 4 के पश्चात् खंड 4क अंतःस्थापित कर इस प्रकार संशोधित किया जाए :

"भ्र-ट आचरण - इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए निम्नलिखित को भ्र-ट आचरण समझा जाएगा :

(1)

*

*

*

(4क) धारा 33क की उपधारा (1) से संबंधित जानकारी प्रस्तुत करने में अभ्यर्थी की असफलता या मिथ्या जानकारी देना जिसे वह मिथ्या होना जानता है या विश्वास करने का कारण रखता है, या धारा 33 की उपधारा (1) के अधीन दिए गए नामांकन पत्र में या धारा 33क की उपधारा (2) के अधीन दिए गए शपथपत्र में किसी जानकारी का छिपाव ।''

ह0/-
(न्यायमूर्ति ए. पी. शाह)
अध्यक्ष

ह0/-	ह0/-	ह0/-
(न्यायमूर्ति एस. एन. कपूर)	(प्रो.(डा.) मूलचंद शर्मा)	(न्यायमूर्ति उ-ा मेहरा)
सदस्य	सदस्य	सदस्य

ह0/-
(एन. एल. मीणा)
सदस्य-सचिव